RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2022-24
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

दिसम्बर-2022 | वर्ष - 14 | अंक : 11 | मूल्य : 5/-

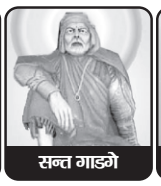

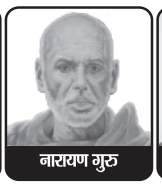

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (सहा.अभि. जलकल विभाग), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश :
सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.), मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल) मो.: 8299162841
हमीरपुर ब्यूरो प्रमुख - रघुवर प्रसाद, मो.: 9793739030
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख लखनऊ मण्डल :
राजकुमार, उन्नाव
मो.: 9889273743, 9392660070
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य : ब्यूरो प्रमुख
रमा गजभिये, मो.: 7828273934
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001, मो. : 09887512360, 0144-3201516
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा-पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020 • IFSC CODE-SBIN0001784

मेले और तीर्थ स्थल

भारत में भरमार मेले लगते हैं। हर धार्मिक तीर्थ स्थान पर निश्चित तिथि को मेला लगता है। और यह मेला 2 दिन से लेकर 2-2 महीने तक चलते हैं। इन मेलों में प्रतिदिन पण्डा, पत्थर और देवी पूजा होती है। दान चढ़ाए जाते है। कई तीर्थ स्थलों में एक दिन में लाखों रूपये का चढ़ावा होता हैं। वटेश्वर करोली आदि के मेले महीनों लगते हैं। ब्राह्मण अपने धन्धे की दुकान लगा लेता है। बनियां की भाँति ब्राह्मण भी अपना आसन जमाकर प्रतिदिन एक ही स्थान पर बैठता है। वह वहीं बैठा बैठा बनियों की भाँति प्रतिदिन फल फूल मेवा रूपए के दान आदि से अपनी झोली भरता रहता है। ब्राह्मण का हर रोज भोजन चलता है। भारत की आबादी 65 करोड़ है : इसमें मात्र 12 करोड़ उच्च हिन्दू हैं हर एक डेढ़ सौ हिन्दू के पीछे एक मन्दिर पड़ता है। भारत में इतने हिन्दू मन्दिरों की भरमार है कि उनकी संख्या 850000 से भी अधिक है : इनमें से चार धाम चौरासी अड्डों पर मन्दिरों के समूह है। एक एक अड्डे पर इतने मन्दिरों की भरमार है कि हर 10 आदमी पर यात्रियों को छोड़कर एक मन्दिर पड़ता है। हर नदी नहर बड़े तालाब के किनारों, ऊंचे पर्वत शिखरों गुफाओं की गहराई, जंगलों के सुनसान हिंसक जीवों के बीच हिदुकों के पण्डों ने मन्दिर स्थापित कर रखे हैं। इन स्थलों को पूज्य घोषित कर दिया है। चौरासी करोड़ देवताओं के जन्म स्थलों, कर्म स्थलों और परिनिर्वाण स्थलों पर तीर्थ बनाए गये हैं। दस अवतार जहाँ जन्मे, जहाँ रहे, जहाँ। रसोई बनाई खाई, जहाँ शिकार की, जहाँ विवाह हुआ, जहाँ नहाए, जहाँ प्रणय किया जहाँ भोग विलास किया, जहाँ युद्ध किया, जहाँ पैर के खड़ाऊ उतार कर रखे, जिन जिन लोगों से मिलने गए और यहाँ तक कि जहाँ जहाँ रोए और मलमूल त्यागे के स्थान भी हिन्दूओं के तीर्थ स्थल बना डाले गए हैं।

इतना ही नहीं लाखों की संख्या में पण्डे तीर्थ स्थलों और देवताओं को झोली में लिए गाँव-गाँव घूमते हैं और देवताओं के दर्शन कराके अपनी झोली भरते हैं। अपनी झोली में द्वारिकाधीश, कालीमाई, ठाकुर जी, सीताराम, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, शेषनाग, गणेश, भैरों, आदि की लकड़ी पत्थर और पीतल की मूर्तियों को डाले हुए गाँव-गाँव पण्डे घूमते हैं और देवता तथा तीर्थ स्थल के दर्शन गाँव-गाँव कराते फिरते हैं।

शहर कस्बे के हर चौराहे तिराहे पर सड़क के किनारे जंगल में रास्ते के सहारे और हर पीपल के पेड़ के नीचे एक छोटा हिन्दू मन्दिर नजर आता है। जब से अंग्रेजी शासन समाप्त हुआ है और भारत में हिन्दुओं का राज्य स्थापित हुआ है हर सरकारी कार्यालय बसस्टेण्ड, कोतवाली, थाना, कारखाना, विद्यालय, पंचायत घर कलक्ट्रेट और कोआपरेटिव बैंकों पर हिन्दू मदिरों का निर्माण हो गया है।

हर गाँव में गवादेवी का चबूतरा बना होता है जिसमें पत्थर की देवी की मूर्ति पधराई होती है। भारत में लाखों गाँवों में ये लाखों चबूतरे बने हुए हैं। जहाँ प्रतिवर्ष नौदुर्गा, होली, दीवाली पर गाँव के लोग इकट्ठे होते हैं और पूजन करते हैं।

हर बड़े धनी या बहादुर आदमी की मृत्यु पर और हर अकाल मृत्यु मरने वाले की मृत्यु पर उसे भूत पीरदेव समझ कर उसकी यादगार में मन्दिर बना दिया जाता है और उसे देवता समझकर पूजा जाने लगता है। भारत में लाखों की संख्या में ऐसे मजार पूजे जा रहे हैं। जिस गाँव या शहर में निकल जाइए हर जगह भूतों के मजार नजर आयेगे कोई भी विदेशी आकर देखे तो उसे यह देश भूतों का देश नजर आयगा।

हर हिन्दू के घर में एक कुराहने के देवता का कोने में देव स्थान बना होता है जहाँ किसी भी आपदा में उसकी तुरन्त पूजा की जाने लगती है। कुछ समर्थ व्यक्ति अपने बाप दादे के मरने के बाद खेत, शमशान या चौराहे पर उसकी यादगार में मठिया बनवा देते हैं और साल में उनके जन्म और मृत्यु के दिन फूल फल चढ़ाकर पूजा करते हैं। हजारें की संख्या में ऐसी मठियाँ खेत चौराहों पर नजर आती हैं। जिस प्रकार हर 500 भारतियों के बीच एक सार्वजनिक मन्दिर होता है उसी प्रकार हर 5 हिन्दू व्यक्तियों के बीच एक व्यक्तिगत मन्दिर होता है अर्थात हर परिवार मे एक पूजा स्थल होता है। इस प्रकार के मठ मन्दिर भारत में लगभग 6 करोड़ की संख्या में होंगे। कहने की जितनी जनसंख्या भारत में है उतने से ज्यादा देवता और इन देवताओं के नाम से उतने ही मन्दिर या पूजा स्थल यहाँ बने हुए हैं। कवि ने इसीलिए कहा था कि-

वन्दे नहीं है जितने, उतने खुदा जहाँ में।
किस किस खुदा के वास्ते शिजदा करे कोई।

अब इन भगवानों के नाम पर इन मन्दिरों में क्या कुछ होता है उसका भी अवलोकन करना चाहिए। हिन्दू मन्दिर ब्राह्मण पुरोहितों ने अपनी जागीरें बना रखी हैं ये मन्दिर उनके भोग विलास और अय्यासी के अड्डे बने हुए हैं। कुछ मन्दिर जिनमें देवदासियों के नाम पर नाच रंग और भोग विलास होता है। वह कहीं भी एक व्यवसायी वैश्यालय से भिन्न नहीं है। सबसे बड़ी शर्मनाम बात तो यह है कि यह व्यभिचार भगवान के नाम पर किया जाता है। इन मन्दिरों में देवता के दर्शन हेतु सकरी गली बना रखी होती है जिसमें एक-एक स्त्री पुरूष जाते हैं और स्त्रियों की पंक्ति तथा पुरूष की पंक्ति अलग होती है उससे यह होता है कि पुरूष स्त्री के साथ दर्शन नहीं करता है और धन सोने चाँदी से लदी या सुन्दर स्त्री पर पंडा निगाह रखता है एक-एक करके दर्शन कराने के बहाने इन मन्दिरों के नीचे बंद तहखानों में उस स्त्री को उतार लेते हैं उसके साथ बलात्कार करते हैं, उसे लूटते हैं और विरोध करने पर हत्या भी कर देते हैं। इस प्रकार की अनेक शिकायतें सुनने में आई हैं। कहीं-कहीं इन मन्दिरों में इन हिन्दू ब्राह्मण पुजारियों ने पत्नियों के पवित्रीकरण की प्रथा चला रखी है। कुलीन हिन्दू मन्दिर के महन्त को अपनी नव विवाहित पत्नी का शीलभग कराने हेतु विवाह के बाद सर्वप्रथम पेश करते हैं। यह

अंधविश्वास फैला रखा है कि मन्दिर के महन्त के द्वारा नव विवाहित से पति से पूर्व भोग करने पर वह पवित्र हो जाती है। यह महन्त भगवान का स्वरूप है। बड़ी निर्लज्जता की बात है कि इस शील भंग कराने के लिए पवित्रीकरण के नाम पर लोग लाइने लगाकर इन्तजार करते हैं। इधर पण्डे महन्त साँड़ों का काफिला क्वारी दुलहिन को दबोचने के लिए तैयार नम्बर लगाए बैठा रहता है। इससे भी बेहयायी की बात तो यह है कि क्वाँरी के इस शील भंग करने के बदले में पुरोहित महन्त को चढ़ावे में धन रूपया सोना चाँदी मिलता है। कुछ कुलीन धर्मान्ध हिन्दू इस कार्य के लिए पगड़ी स्वरूप उस महन्त को अधिक धन देते हैं ताकि उसकी नवविवाहिता पत्नी का पंडा पहले पवित्रीकरण करदे। एक बार बम्बई के हाईकोर्ट ने ब्राह्मणों की इस प्रथा की कटु निन्दा की थी।

इन मन्दिरों में पन्डे ठगों और चोरों के गिरोह चलाते हैं जो यात्री के पीछे रेलवे और बस स्टेशनों से ही लग जाते हैं। ये ठग धर्म भीरू हिन्दू की गठरी काट लेते हैं और अवरोध होने पर उसकी हत्या भी कर देते हैं। ये पन्डे दलालों और गुन्डों के दल भी रखते हैं। दलाल कमीशन खाकर भोले भाले यात्री को पटाकर पण्डों को सौंप देते हैं और पन्डें उसका वक्कल उतार लेते हैं। यदि कोई यात्री लूट का विरोध करता है तो गुन्डे उसे ठीक कर देते हैं। भारत के सभी हिन्दू मन्दिर लूट और ठगी के अड्डे बने हुए हैं।

भारत में हजारों की संख्या में देवदासियाँ काम करती हैं जो पैसों के लिए मूर्ति के समझ नाचती हैं और आजीवन इसी व्यवसाय में रहती तथा पण्डो की काम पिपासा पूरी करती हैं। दक्षिण के हर बड़े–छोटे मन्दिर में हजारों की संख्या में ये देवदासियाँ पाई जाती हैं।

इन मन्दिरों में कीर्तन करने वाली विधवा स्त्रियाँ वेतन भोगी होती हैं जो पैसा लेकर घण्टे के हिसाब से इन मन्दिरों में कीर्तन करती हैं। इसके बदले में उन्हें पेट भरने के लिए पंडों की ओर से मेहनताना दिया जाता है। ये विधवायें कभी–कभी किसी पण्डे के जाल में फंसकर गर्भवती हो जाती है फिर या तो वह कुलीन हिन्दू विधवा कन्यायें वहाँ से हटकर वैश्यालयों के कोठों पर बैठ जाती हैं अथवा ये कन्यायें अपनी अस्मत जिन्दगी भर बेचती है इस अस्मत के बदले जो धन इकट्ठा होता है वह उसके मरने के बाद बजाय हिन्दू धर्म के मुसलमान धर्म की वृद्धि हेतु लगता है क्योंकि कोई हिन्दू ऐसी स्त्री का वारिस बनने के लिए तैयार नहीं होता है।

ये मन्दिर तस्करी और चोर बाजारी के लिए प्रयोग किए जाते हैं। धार्मिक स्थानों पर छापे मारना पुलिस के लिए छूट नहीं है। बड़े बड़े तस्कर इन मन्दिरों की धर्मशालाओं में विश्वास पाते हैं और पुजारियों के माध्यम से तस्करी का माल मन्दिरों में छिपाकर रखते हैं। इन तस्करों में महन्त पुजारी चौथ खाता और देश के साथ गद्दारी करता है। बहुत सा काला धन्धा करने वाले और ब्लैक करने वाले बनियाँ मन्दिरों के तहखानों में माल छिपाकर कृत्रिम अभाव दिखाते और ऊँचे भाव में चीजों को बेचते हैं।

आए दिन मंदिर के देवता की मूर्ति, उस मूर्ति का मुकुट आदि चोरी चले जाने की घटना सुनते हैं आज एक–एक मन्दिर में लाखों करोड़ों रूपये की मूर्तियाँ लगी हुई हैं जिन्हें पण्डे चारों से मिलकर बेच लेते हैं और बाद में चोरी की रिपोर्ट लिखा देते हैं। मन्दिर की मूर्ति की चोरी का धंधा पुरोहितों ने खोल रखा है। तिरूपति के मन्दिर की मूर्ति का मुकुट चोरी चला गया जिसे बाद में 7 करोड़ रूपये में नया बनवाया गया। पण्डे इस चोरी का माल खा गए।

इन मन्दिरों में शराब के अड्डे चलते हैं। कलारी की भाँति ये मन्दिर शराब के ठेकेदार पण्डों के सहयोग से या पण्डे स्वयं अपने आप शराब का ठेका खोल बैठते हैं। कोई दर्शन के बहाने यात्री मन्दिर में जाता है वह दो रूपया टिकाता है और पुजारी मन्दिर की मूर्ति के पीछे रखे घड़े में से शराब का गिलास पकड़ा देता है ऐसा एक बार समाचार भी छपा था कि हनुमान जी के मन्दिर में मूर्ति के पीछे तह में शराब का कुण्ड पाया गया जिसमें से दो रूपया गिलास पुजारी भक्तों को तुरन्त बेचता था भक्त दर्शन के बहाने भीतर गया और दो रूपये की की कुलिया डालकर बाहर निकल आया। पुलिस को सुराग मिलने पर उस पुजारी को पुलिस ने पकड़ा था।

कहीं कहीं ये मन्दिर जुए के अड्डे बने हुए हैं। ये पुजारी त्यौहारों और मेलों के अवसर पर इन मन्दिरों के तहखानों में जुए के अड्डे चलवाते हैं और इन अड्डों से जुए से एक रात में लाखों रूपये की आमदनी होती है। इन अड्डों के दलाल लगे हुए होते हैं जो बड़े–बड़े जौहरी सौदागर और ऊँचे सेठों को इन अड्डों पर लेजाकर बैठा देते हैं। पहले तो पंडा पार्टी चकमा और जालसाजी से उस जौहरी सौदागर और सेठ का धन ऐठ लेती है और अगर दाब पेच में ये किसी प्रकार न हार सके तो यह पार्टी उनका कत्ल कर वहीं तहखाने में दफना देती है और माल हड़प लेती है।

मन्दिर बड़े–बड़े डकैतों के पनाह गृह है। घंटा चढ़ाने के नाम पर बड़े–बड़े डाकू इन मन्दिरों पर आते हैं सोने चाँदी के घंटे चढ़ाते हैं और पूजारी इन डकैतों इन डकैतों को आर्शीवाद देता है। इतना ही नहीं वह महन्त डकैती का माल भी रखता है। एक बार सुना गया था कि उत्तर प्रदेश के एक मन्दिर का पुजारी डकैतों को शरण देने और उसका माल रखने का दोषी पाया गया।

इस प्रकार ये मन्दिर चोरों, डकैती, जुआ, शराब, बलात्कार और हत्या जैसे अपराधों के अड्डे हैं। कितनी शर्म की बात है कि किसी धर्म के पूजा स्थल ऐसे अपराधों के अड्डे नहीं हैं जिनकी हिन्दू मन्दिरों में भरमार है। सामान्यतः जितने अपराध कुल संस्था में होते हैं उनके शिकायती और गैर शिकायती 50 प्रतिशत अपराध इन तीर्थ स्थलों पर मन्दिरों में होते हैं। जब–जब इन स्थली पर मेले आदि पर्व का समय होता है तब तो ये मन्दिर व्यभिचार के अड्डे बन जाते हैं और वैश्यालय, मन्दिर, जुआगृह भी इनसे मात खा जाते हैं।

इन मन्दिरों में पुरोहितों के साथ–साथ मल्लाहों और गाइडों के गिरोह भी काम करते हैं। गाइड मन्दिरों के पहले ही रास्ते में मिल जाते हैं और पूरे दर्शन कराने का विश्वास दिलाकर ले चलते हैं, पण्डों से उसकी साँठ–गाँठ पहले से ही रहती है। पहले वे पण्डों से ठगवाते हैं जिनसे उनका कमीशन बँधा होता है इसके बाद दर्शन कराने के मनमाने पैसे वसूलते हैं। मनमाने पैसे न देने पर झगड़ा करते हैं यहाँ तक कि पालतू गुण्डों से यात्री को घिरवा लेते हैं और मनमाना पैसा लेकर ही पीछा छोड़ते हैं। कभी–कभी यात्री अपनी पत्नी बच्चों के आभूषण देकर ही इनसे छूटकारा पाता है। तीर्थ स्थलों पर मल्लाह भी तंग करते हैं।

बड़े–बड़े पर्वों पर तो किन्हीं–किन्हीं मन्दिरों में (खासकर दक्षिण में) भगवान के दर्शन कराने के लिए भक्तों से 100 से लेकर 500 रूपया तक प्रति व्यक्ति से पण्डे रिश्वत लेते हैं। कुछ मन्दिरों (देवी और भगवान के मन्दिर दक्षिण में बिठोवा भगवान का मन्दिर) में पुरोहित सुबह ही बोली लगाते हैं और ऊँची बोली वाला ठेका ले लेता है वह ठेकेदार पुरोहित ही उस दिन दर्शन करा सकता है दूसरा नहीं। इस कारण वह पुरोहित 100 से 500 रूपया लेकर ही दर्शन कराता है। ऐसी लूट कम से कम किसी धर्म में भगवान के दर्शन के नाम पर नहीं की जाती है जैसी हिन्दू धर्म में की जाती है। कभी कभी ये पुरोहित समय की टिकटें छपवाकर दर्शन कराने के लिए बेचते हैं और इन टिकटों से लाखों रूपया कमाते हैं जिस प्रकार एक सिनेमा के शो की टिकटें बिकती हैं उसी प्रकार पत्थर के भगवान के दर्शन हेतु टिकटें बिकती हैं। यह कैसा है व्यापारी धर्म और कैसा है इनका तिजारती भगवान?

अब मन्दिरों में लगी पूँजी उनकी आवर्तक आय तथा उसके उपभोग पर भी हम विचार करें। हिन्दू धर्म सबसे बड़ा व्यापारी धर्म है। इनके धर्म के सब अड्डे (मन्दिर) व्यापार के अड्डे हैं। ये अड्डे पुरोहितों की निजी जागीरे तथा सोने की खाने हैं। पीछे हम वर्णन कर चुके हैं कि भारत में इतने मन्दिर हैं कि इनकी संख्या 8 लाख से अधिक है और हर मन्दिर व्यापार का अड्डा है। पुस्तक में विस्तारभय से और फिर सबके आकड़े भी उपलब्ध नहीं है, हम यह पहले कुछ बड़े मन्दिरों का ही वर्णन करेंगे।

पहले हम उ० प्र० से चलते हैं। उ० प्र० में बदरीनाथ केदारनाथ मन्दिर हिन्दुओं का प्रसिद्ध मन्दिर है हिन्दुओं में यह चार धामों में से यह एक प्रसिद्ध धाम है। यहाँ पर प्रतिवर्ष लाखों यात्री आते हैं। बद्रीनाथ भगवान की मूर्ति को किसी भी शूद्र को छूने का अधिकार नहीं है।

सम्पत्ति इस मन्दिर के नाम 181 गाँव लगे हैं जिनकी हजारों वीघा भूमि इस मन्दिर के नाम है। मन्दिर की अपनी लगभग 80 दर्जन खोखों सहित दुकाने हैं। जिनसे लगभग दो लाख 75 हजार रूपये की वार्षिक आय अनुमान है। इस मन्दिर की अब एक वर्ष में लगभग 13 लाख रूपया आमदनी हो रही है जो दस वर्ष पहले 4 लाख थी।

इस मन्दिर के पास मूर्ति के आभूषण और बर्तन सब सोने के हैं, चाँदी के आभूषण नाम मात्र के हैं। इन सोने के वर्तनों में ब्राह्मण पण्डे पुजारी खाते हैं। इस मन्दिर के पास सोने चाँदी की मालायें, चूड़ियाँ, गहने, मुकुट, वर्तन आदि का मूल्य दस वर्ष पूर्व लगभग 8 लाख था जिसकी कीमत आज एक करोड़ लाख हो गई है इस मन्दिर में लगभग 1000 ब्राह्मणों का प्रतिदिन का भोज होता है जो निठल्ले बैठे खाते हैं। जहाँ पण्डे पुजारी सोने की थालियों में पूड़ी मलाई खाते हैं वही मन्दिर से थोड़ी दूर नीचे इनकी जूठन कुत्तों के साथ अछूत जाति के इंसान चाटते दिखाई देते हैं। हिन्दुओं का पण्डा और वह पत्थर का भगवान टुकर–टुकर देखता रहता है। आगे भी बद्रीनाथ का वर्णन किया गया है। उ० प्र० में ऐसे अनेक मन्दिर हैं, जिनका वर्णन आगे किया गया है।

आन्ध्रा प्रदेश में सबसे अधिक प्रसिद्ध तिरूपति के भगवान वेकटेश्वर का मन्दिर है। इस मन्दिर को भारत सरकार ने अखिल भारतीय संस्कृति संस्थान स्थापित्त करने के लिए दस लाख रूपए के अनुदान दिए। इस मन्दिर की आमदनी एक वर्ष में करोड़ों की संख्या में होती है। लाखों की संख्या में लोग मुन्डन कराने आते हैं। सन् 1970 और 1972 में प्रतिवर्ष 77 करोड़ रूपए की आय हुई। 1979 में इस मन्दिर के गुप्तदान की पेटी से एक लाख बीस हजार के नोट निकले थे। यह गुप्तदान था। किसी का नाम नहीं था। वेक्टेश्वर के इस मन्दिर की मासिक आय 45 से 50 लाख रूपया तक होती है। मार्च 71 में 24 लाख 37 हजार 777 रूपए की आय हुई और मार्च 79 में 36 लाख 535 रूपए 37 पैसे आय हुई थी।

हिन्दू मन्दिरों का वर्ष 1972–73 में जो बजट बनाया गया था उसमें दस करोड़ की आय और 8 करोड़ का व्यय दिखाया था यह आमदनी 30 वर्ष पहले मात्र 60 लाख के करीब थी। दस करोड़ की आय के अतिरिक्त एक करोड़ की आय मुण्डन के बाल बेचने से होती है। इस वैक्टेश्वर मन्दिर के भगवान के आभूषण और मुकुट सब सोने के हैं यहाँ तक कि मूर्ति के कानों की बालियाँ भी सोने की हैं। इस मन्दिर के आभूषण लगभग दस करोड़ रूपए की कीमत के हैं जो दस वर्ष पहले मात्र 80 लाख के करीब थे। वैकटेश्वर की मूर्ति के मुकुट का मूल्य लगभग 7 करोड़ रूपया है। इस मन्दिर की अपनी सम्पत्ति अरबों रूपए की है। चल सम्पत्ति जिसमें हीरे मोती, सोना, चांदी भी शामिल करके 50 करोड़ से अधिक की है और अचल सम्पत्ति जिसमें भवन भूमि मूर्ति शामिल हैं 70 करोड़ के करीब हैं। इस मन्दिर की वार्षिक आमदनी दस करोड़ के अतिरिक्त चढ़ावे की एक करोड़, वालों की एक करोड़ कुल मिलाकर 12 करोड़ से अधिक है। मन्दिर की अपनी सैकड़ों वर्से और गाड़ियाँ हैं तथा सैकड़ों दुकाने हैं। इस

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

मन्दिर में लगभग 2 करोड़ रूपए का घी का खर्चा है जो पंडे खा जाते हैं। आँन्ध्र के अन्य मन्दिरों का वर्णन आगे किया गया है।

महाराष्ट्र में सबसे प्रसिद्ध मंदिर पन्डरपुर का है इसमें बिठोवा रूकमणी के मन्दिर हैं। इस मन्दिर में अछूत सन्त चोखा मेला की हत्या कर दी गई थी क्योंकि वह इसमें पूजा के लिए घुस गए थे। इस मन्दिर के दरवाजे अछूतों के लिए सदैव से बन्द रहे हैं।

आय–इस मन्दिर की आय में अपनी आमदनी के अतिरिक्त सरकार की ओर से अनुदान में बहुत रूपया दिया जाता है। स्वतंत्र भारत की सरकार ने सन 1950 के बाद से दस हजार रूपया अनुदान देना प्रारम्भ किया था जो अब लाखों में बढ़ा दिया गया है।

पुजारी परिवारों को इस मन्दिर से करोड़ों रूपया की आय प्राप्त होती है। पुजारी लोग बिठोवा के दर्शन करवाने के लिए पाँच–पाँच सौ रूपये रिश्वत लेते हैं। यहाँ दिन भर के लिए पुरोहित बिठोवा और रूक्मणी को नीलाम कर देते हैं। सुबह ही बोली लगती है। जो नीलाम में खरीद लेता है वही दर्शन कराता है। दर्शन कराने के लिए पाँच–पाँच सौ की टिकटें बेची जाती हैं। गरीब दर्शन करने जाय तो उन्हें धक्का मारकर पण्डे भगा देते हैं। कभी–कभी पुलिस कमीशन लेकर दर्शन के लिए टिकट बेचती है दर्शन के लिए एक–एक सौ रूपए का टिकट पाँच–पाँच सौ रूपए ब्लेक में बेचता है। पुजारी परिवारों की आय अलग–अलग होती है हरिदास, विनाडे दरिवारक, डिंगरे, देवते, डागे उत्पत आदि परिवारों की करोड़ों रूपए की आय दस वर्ष के मध्य हुई। इस पन्डरपुर की आमदनी से लगभग तीन सौ परिवार पुजारी ब्राह्मणों के पल रहे हैं इन पुजारी परिवारों में मन्दिर की आमदनी हेतु सदैव मुकद्दमेबाजी होती रहती है, अब तक सैकड़ों मूकद्दमें लड़े जा चुके हैं। अंग्रेजों के शासन में भी 78 मुकद्दमें लड़ गए थे। ये पुजारी पत्थर की मूर्ति को नहलाने, कपड़े पहनाने मक्खन की मालिस करने से लेकर पेड़े लड्डुओं के भोग लगाने आदि तक 23 प्रकार की पूजाएं कराते हैं और सब पर दान का पैसा चढ़ावा चढ़ता है।

पंडरपुर के इस मन्दिर के पास सैकड़ों एकड़ भूमि है। करोड़ों रूपए की कीमत के सोने चाँदी और हीरा मोती के आभूषण हैं। अनेक दुकान इस मन्दिर के पास हैं। इसके स्कूल व उद्योग चल रहे हैं। महाराष्ट्र के अन्य अनेक मंदिर हैं जिनका वर्णन आगे किया गया है।

राजस्थान में नाथ द्वारा का प्रसिद्ध मंदिर है। इस मंदिर को उदयपुर राज्य से 28 गांव दान में मिले थे इसके बाद और भी बढ़ गये हैं। इस मन्दिर की जायदाद 20 करोड़ की है इसकी अपनी निजी दुकानें और निजी बसें हैं। अंग्रेजों के राज्य में दी गई मन्दिर की जागीर का मूआबजा जमीन मकान की आय के अतिरिक्त भेंट पूजा और दान की आय इस मन्दिर को होती है। इस मन्दिर को दैनिक आय इतनी है कि 7 हजार रूपया रोजाना का खर्च निकाल कर इससे लाखों रकम शेष बच जाती है एक वर्ष की आमदनी जो इस मन्दिर की होती है वह एक करोड़ 80 लाख के बराबर है जो बीस वर्ष पहले मात्र 18 लाख थी जिसमें मकान दुकानों का किराया व लाभ, जागीरों का मुआवजा जमीन की आय तथा दान की आमदनी के साथ भेंटपूजा व वाहनों आदि की आमदनी भी सम्मलित थी।

नाथ द्वारा में लगभग एक हजार कर्मचारी है। मन्दिर के 45 विभाग है। जिसके अलग–अलग कर्मचारी है ये कर्मचारी 90 प्रतिशत ब्राह्मण है और वेतन भोगी है। मुख्य मठाधीश 9 लाख रूपए निकालकर हड़प गया था। याद रहे इन मठों के मठाधीश को छूट होती है वह मन्दिर के धन को किसी भी प्रकार हड़प कर ले उसके विरूद्ध कुछ भी कहना धर्म विरूद्ध है। राजस्थान के अन्य मन्दिरों का वर्णन आगे किया गया है।

यों तो हिमाचल में हजारों मन्दिर हैं। रामपुर और वसैहर में अनेक मंदिर हैं पर इनमें 14 हिन्दू मन्दिर बड़े–बड़े हैं। इनमें से कई मन्दिरों की औसत आय पचास लाख रूपए वार्षिक के करीब है जो पचास वर्ष पूर्व मात्र 5 लाख थी। इन मन्दिरों के पास लाखो रूपए की जमीने लगी हुई हैं। इन मन्दिरों की अपनी दुकाने और वाहन हैं। इन मन्दिरों की जायदाद कई करोड़ रूपयों की हैं।

इस सम्पत्ति का पूरा दुरूपयोग होता है। पंडे किन–किन व्यसनों में इसको खर्च करते हैं इसका हिसाब किताब नहीं है। पंडे लोग इस सम्पत्ति एवं आय को बिना हिसाब के हड़प कर जाते हैं। हिमाचल प्रदेश के अन्य मन्दिरों का वर्णन आगे किया गया है।

तमिलनाडु में कई हजार हिंदू मन्दिर हैं। इन मंदिरों के अपने ट्रस्ट हैं जिनके ट्रस्टी ब्राह्मण लोग ही होते हैं। इन मंदिरों के पास करोड़ों रूपए की संपत्ति है। इन मंदिरों की सम्पत्ति की ट्रस्टी लोग लूट खसोट बेईमानी एवं चोरी करते हैं। द्रविड़ मुन्न व कषगम की सरकार के समय इन ट्रस्टों में सम्पत्ति की लूट खमोट पर झगड़े चलते रहते थे उस सरकार ने इस ट्रस्टों में से एक बार 1380 ट्रस्टों का फिर से गठन किया था।

ब्रहदेश्वर मंदिर के पास 3 लाख बीघा भूमि थी जिसकी पण्डों ने एक लाख बीघा भूमि हड़प कर अपनी निजी सम्पत्ति बनाली है और मंदिर के पास 2 लाख बीघा भूमि अब भी शेष है। हजारों मजदूर प्रतिदिन इनके खेतों पर मुफ्त में काम करते हैं। इस भूमि के लिए बीज खाद सरकार के गोदामों में रियायत रेट पर दिया जाता है। इस मंदिर में सैकड़ों ब्राह्मण प्रतिदिन मुफ्त में भोजन करता है।

पारथा सारथी मंदिर एक प्रसिद्ध मंदिर है के नाम इसके पास करोड़ों रूपए की सम्पत्ति है। इस मंदिर की यह विशेषता है कि विष्णु के सहसनामों पर एक हजार आठ स्वर्ण सिक्कों की हार मंदिर की मूर्ति को पहनाया जाता है। इस पूर्ण हार की कीमत 50 लाख 80 हजार रूपए होगी। (अर्थात एक सिक्का 1 तोले की कीमत पाँच हजार रूपए प्रति तोला) इस मंदिर के सहारे हजारों ब्राह्मण परिवार पल रहे हैं।

थनजबूर मंदिर दक्षिण का एक प्रसिद्ध मंदिर है। इस मंदिर के पास कानूनी कई लाख बीघा भूमि है इसके अतिरिक्त दस लाख बीघा भूमि पर इस मंदिर के नाम से अवैध रूप से कब्जा कर रखा है। किसी सरकार या ग्राम समाज ने आज तक दस लाख बीघा अवैध भूमि को मंदिर से छुड़ाने की कार्यवाही नहीं की है। इस भूमि से कई लाख ब्राह्मणों के परिवार पल रहे हैं। इस भूमि पर धर्म के नाम पर गरीब मजदूर दलितों से मुफ्त में काम कराया जाता है और हजारों दलित पागलों की भांति इस भूमि पर कमाई करके निठल्ले पण्डों के हवाले कर देते हैं और स्वयं हाय झाड़कर रह जाते हैं। यह सोचते हैं कि दयालु भगवान उस सेवा से उनसे दया कर उनकी दशा पलट देगा। परन्तु आज तक इस भगवान ने इन मूर्ख दलितों की हालत नहीं बदली। ये कभी नहीं सोच पाये कि यह भगवान तो पन्डों का है उनका नहीं है। तमिलनाडु के अन्य मन्दिरों का वर्णन आगे किया गया है 800 वर्ष पूर्व उदीपी में एक मन्दिर की स्थापना की और 8 मूर्तियों का जिस जगह निर्माण कराया था वहाँ आठ मठों की स्थापना हो गई। इन मठों की वार्षिक आय 80 लाख के करीब है इस आमदनी का उपभोग पण्डे शराब, बीड़ी, सिगरेट, भांग, गाँजा आदि में करते है। इन मठों के पास सैकड़ों बीघा जमीन है। इनकी अपनी दुकानें और धर्मशालाएं हैं जो आय साधन के हैं यहाँ सैकड़ों ब्राह्मण हैं जो प्रतिदिन निठल्ले भोजन करते हैं। घी, दूध, दही जो भोजन के लिए मंगाया जाता है उसे पन्डे सपरिवार खाते हैं।

मैं पिछले पृष्ठों में वर्णन कर आया हूँ कि भारत में 8 लाख से अधिक मंदिर है और अटक से कटक तक, कश्मीर से कन्या कुमारी तक तथा सिन्ध से सागर तक सारे भारत में मंदिर फैले हुए हैं तथा और बनते जा रहे हैं। जिन राज्यों में हिन्दू बाहुज्य जनता अधिक है उन राज्यों के मन्दिरों की संख्या भी अधिक है इनमें उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, मैंसूर, महाराष्ट्र, तमिलनाडू, केरल, गुजरात तथा बिहार प्रमुख हैं राज्य वार मन्दिरों से आय (वार्षिक) इस प्रकार है –

प्रदेश	आय
उत्तर प्रदेश	84 लाख
उड़ीसा	10 करोड़
मैसूर	3 करोड़ 30 लाख
महाराष्ट्र	2 करोड़ 90 लाख
मद्रास	20 करोड़
केरल	24 करोड़
गुजरात	2 करोड़ 70 लाख
बिहार	1 करोड़

1977 में उपरोक्त मंदिरों की आय लगभग 63 करोड़ रूपए वार्षिक थी जब कि सारे भारत में मन्दिरों को मिलाकर वार्षिक आय अरबों रूपया है। जो 1977 के 10–15 वर्ष पहले इसका दसवाँ भाग मात्र थी। आज यह आमदनी 63 करोड़ की जगह 6 अरब है।

करोड़ों रूपया ऐसी आमदनी का होता है जो किसी लेखे जोखों में ही नहीं होता है। भारत में कुल मंदिर व महन्तों की आय मिला दी जाये तो भारत के कुल मंदिर व महन्तों की आय 1977 में 20 अरब रूपए से भी अधिक होती है। जो आज सौ अरब है।

इन मन्दिरों की आय से हजारो पन्डे व पुजारियों के परिवार पलते हैं। जो इन मन्दिरों की आमदनी से ही खाते पीते कपड़े पहनते, मन्दिरों के घर में रहते पढ़ते लिखते, यहाँ तक कि बीड़ी, सिगरेट, शराब, माँस, मछली सब कुछ इसी से खाते पीते हैं। 1979 में कौवा कौन के कुमेश्वर मन्दिर में 89 रूपये की सिगरेट खरीदी गई थी। मन्त्री कन्ना पन्ना सलीम के लिए 400 का मांस मंदिर के कोस से मंगाया गया था लाखों रूपया खर्च दिलाया गया था। रामेश्वर के मन्दिर की पुताई में 60 लाख रूपया दिखाया जाता था। हिन्दू रिलोजस इन्डाउमेंट कमीशन की 1060 की रिपोर्ट के अनुसार जगन्नाथपुरी के मंदिर फंड में से दो बोतले शराब खरीदी गई थी।

ये मन्दिर व्यापार के अड्डे हैं, यहाँ हर प्रकार का भ्रष्ट व्यापार होता है। मन्दिर के भगवान के नाम पर जुआ, दड़ा, सट्टा से लेकर बसों, दुकानों, लकड़ी, कृषि आदि का व्यवसाय व व्यापार होता है। पण्डों का अपना चढ़ावे का व्यापार चलता है। इन मन्दिरों में भक्तजन प्रसाद चढ़ाते हैं इसे पण्डे लोग ले जाते है और दुकानदारों को बेच देते हैं वहीं दुकानदार भक्तों को चढ़ाने के लिए पुनः बेच देता हैं इस प्रसाद पर मात्र पण्डा जाति (ब्राह्मण) का ही अधिकार होता है। इस प्रसाद में आटा, लड्डू, सेव, केला, नासपाती, सन्तरा, फल, घी, नारियल, यहाँ तक कि नमक मिर्च आटा तथा देवी के मन्दिरों में जीवित बकरा भी शामिल होता है।

इन मंदिरों में भ्रष्टाचार के नाम पर क्या–क्या नहीं होता। मथुरा, द्वारिका, बनारस आदि मंदिरों में वैश्यावृत्ति, व्यभचार, अप्राकृतिक व्यभचार, मघमान, जुआ, चोरी, डकैती, बलात्कार, हत्या सब कुछ होता है। जवान स्त्रियों को रात के समय यात्रियों को पेशकर उनकी जेबे खाली कराई जाती हैं। कहीं–कहीं तो पंडे अपना पैत्रिक सम्बन्ध बताकर यात्री को अपने ही घर ठहरा लेते है और अपनी सुन्दर लड़कियों को पेशकर यात्री की जेब पर डाका डालते हैं। यदि पंडे की कन्या द्वारा लूट का संकोच किया गया तो यात्री पर अनाचार का आरोप लगाकर हत्या तक कर देते हैं। हरिद्वार, वाराणसी, गया, विंध्याचल, देवगढ़, भुवनेश्वरपुरी आदि के मन्दिरों पर पंडों का अधिकार है। ये स्वयं व्यभचार करते हैं और नौकरों से भी काम कराते हैं।

इन मंदिरों में देवदासी प्रथा का चलन भी पाया जाता है। जिन मन्दिरों में देवदासियाँ पाई जाती हैं वे अधिकतर दक्षिण में ही है। जिस माँ बाप के बच्चे नहीं होते हैं वे हिन्दू अपनी एक लड़की मंदिर के निर्मित भेट कर देते हैं।

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

वह मन्दिर में ही पलती और बड़ी होती है तथा वही जवान बनती है। इस देवदासी का विवाह देवता के साथ होता है, इन देवदासियों को पन्डे खूब भोगते हैं और अपनी वासना पूरी करते हैं। कुछ देवदासियाँ वैश्याओं की भांति यात्रियों की काम वासना पूरी करती है इन देवदासियों को मंदिर से गुजारे के लिए निश्चित धन मिलता है इनको नाच गाना सिखाया जाता है। ये देवता के समक्ष नाचती है और जब बूढ़ी हो जाती है तब ये ही खाला का काम करती है।

कुछ मन्दिरों में शराब बेची जाती है, तिरूपति के वैकटेश्वर ने तो लाटरी डाली थी। कहीं–कहीं तो नाजायज हथियारों का जखीरा होता है जो वहीं बनते और बेचे जाते हैं।

इन मन्दिरों में भिखारियों और कोढ़ियों की कतारें लगी रहती हैं ये भिखारी भक्तों के पीछे पड़ जाते हैं और कोढ़ी ऊपर टूट पड़ते हैं परिणाम यह होता है कि भक्त यात्री इनको भीख देकर अपनी जल्दी जान छुड़ाता है, मन्दिरों पर जब मेले लगते हैं तो इसमें हजारों की संख्या में जेब कतरे घूमा करते हैं जिनका सम्बन्ध पुरोहितों से होता है। पुरोहित लोग इन जेब कतरों को मेला ठेके पर उठा देते हैं। और दिन भर की बोली लगाकर पन्डे के पास बोला धन जमा कर देते हैं। (1)

इन मन्दिरों के सहारे पंडों के होटल धर्मशाला जलपान ग्रह भी चलते है इन होटलों सुरा सुन्दरी उपलब्ध कराई जाती है। याद रहे होटल, धर्मशाला, व्यापारिक दुकाने यहाँ तक चाय पीने की दुकाने भी अनुसूचित जाति के व्यक्ति को खोल लेने की सख्त मनाही होती है इन मन्दिरों की दुकाने पगड़ी पर घटाई जाती है।

ये मन्दिर अन्धविश्वास और पाखण्ड के अड्डे हैं जहाँ भोली भाली जनता को कल्याण के नाम पर इन अड्डों में सदैव ठगा जाता है मानसिक दासता में जकड़ी हुई है। मन्दिर में बैठा हुआ पंडा भूखे पेट भक्त से कहता है कि जेहि विधि राखे राम ताहि विधि रहिए' अर्थात भूखे हो तो भूखे ही रहो यही राम (हिन्दू–भगवान) चाहता है परन्तु स्वयं रसगुल्ला मलाई खाता और गुलछरे उड़ाता है।

दर्शनार्थी मन्दिर में जाकर जो कुछ ले जाता उसे पंडे के हवाले कर देता है वह पूजा पाठ में भाग नहीं लेता है ये मंदिर गन्दगी के भी अड्डे होते हैं। मन्दिर के बाहर यात्रियों के हाथ पैर धोने की सुविधा नहीं होती इसलिए पैरों के साथ धूल अन्दर चली जाती है। केलों के छिलके चावल हल्दी के अंश नारियल की धूल फूल पत्ती, सीपीयाँ, कीचड़ पानी सब जगह बिखरे पड़े होते हैं। मन्दिर में घोर शोर गुल होता है।

इन मन्दिरों पर भिखारियों और कोढ़ियों की भरमार होती है। ये भिखारी और कोढ़ी यात्रियों के पीछे पड़ जाते हैं और तब पीछा छोड़ते हैं जब कुछ न कुछ यात्री की जेब से निकाल लेते हैं। मन्दिर के परिक्षेत्र में भिखारियों एवं इन कोढ़ियों की संख्या लगभग 3 करोड़ से अधिक है जो आजादी मिलने के समय 70 लाख थी कोढ़ियों और भिखारियों में कुछ ऐसे पेशेवर लोग हैं जो वास्तव में कोढ़ी नहीं हैं पर हाथ पैरों में लेशयुक्त पदार्थ लगाकर कोढ़ी का रूप धारण कर बैठ जाते हैं। ये कोढ़ी भिखारी इन पण्डों के वेतन भोगी नौकर होते हैं जो भिक्षा में बीस प्रतिशत इन पंडों को देते हैं। वही भिखारी इन मन्दिरों में भीख माँग सकता है जिसे पंडे स्वीकृति देते हैं।

इन मंदिरों में जितनी संख्या इन भिखारियों की है उतनी ही करीब अच्छी पोषाधारी जेबकतरों की है ये कतरे मन्दिर के पंडों की ओर से कमीशन पर रखे जाते हैं और अपने हिस्से में से पुलिस को भी चौथ देते हैं।

हर बड़े मंदिर के नजदीक शराब के ठेके होते हैं। पंडे पुजारी यात्रियों कों नंगा करने के लिए सुरा और सुन्दरी दोनों का प्रयोग करते हैं। हर बड़ा मंदिर जुआ सट्टे और लाटरी का अड्डा होता है। अब तो जब से मुसलमानों और अलीगढ़ के भय का हौआ खड़ा किया गया है तब से इस हौआ का सहारा लेकर इन बड़े–बड़े मंदिरों में हथियारों का जखीरा खड़ा किया गया है। इन मंदिरों में अब मीटिंग करके हिन्दुओं में साम्प्रदायिक भावना भरी जाती है और सरकार के ऊँचे कटटर हिन्दू अधिकारी इसमें सहयोग देते हैं।

इन मंदिरों के पास हजारों कुण्टल सोना है : तिरूपति के मंदिर की तीन कुण्टल सोना बेचकर 7–8 करोड़ रूपए के हीरों का हार बनवाने की योजना है। सरकार के खजाने में जितना सोना है उससे कहीं अधिक सोना इन मंदिरों के पास है। सोने चाँदी की धातुओं की मूर्तियों को जिनकी कीमत लाखों रूपया होती है ये पंडे चुरा लेते हैं और पुलिस में रिपोर्ट लिखा देते हैं आये दिन मन्दिर के भगवानों की चोरी के समाचार पढ़ने में आते हैं। (1) इन मंदिरों में भगवान (मूर्ति) की स्थापना दूसरी मूर्ति बनाकर कर दी जाती है और पूर्व सोने के भगवान को सुनार कुछ सस्ते में खरीदकर अग्नि के हवाले कर देता है तथा तपाकर ठोंक पीट गोला बना देता है तब न यह भगवान उस पंडे पेट में दर्द करता है और न उस सुनार का कोई घाटा कर पाता है।

इन मंदिरों के बड़े–बड़े महन्तों का तस्करों से सम्बन्ध होता है और तस्करी में सम्मिलित रहते हैं। तस्करी के माल की गोदामें इन मंदिरों के नीचे तहखानों में बनी होती है जहाँ न पुलिस छापा मारती है और कोई यात्री वहाँ जा सकता है।

मंदिर के संडे–पन्डे सुरा सुन्दरी में लीन रहते हैं। काशी में कभी ऐसे समाचार सुनने में आते हैं कि अमुक पुजारी जवान कन्याओं को लेकर भाग गया है।

हिन्दु मन्दिरों में एक–एक दिन में लाखों रूपयों की आय होती है, करोड़ों की सम्पत्ति है पर क्या कानून है कि इन धर्म के धन्धेगीरों पर न आयकर न सम्पत्तिकर। इनका एक छत्र राज्य है। न पुलिस पर मार सकती है न सरकार अधिग्रहण कर सकती है। प्रत्येक मन्दिर एक स्वतन्त्र वेटिकन स्टेट बना हुआ है।

अब हम कुछ मेलों का वर्णन करेंगे जहाँ हर वर्ष बड़े–बड़े मेले लगते हैं और ये स्थान तीर्थ एवं पर्यटन स्थल बन चुके हैं। वैसे तो भारत में लगभग 700000 मेले प्रतिवर्ष लगते हैं। इन मेलों के अतिरिक्त एक लाख ऐसे मेले लगते हैं जो न तो वार्षिक है और न नियमित। इन आठ लाख के अतिरिक्त भारत में 357 सरकारी प्रदर्शनियाँ (मेले) प्रतिवर्ष लगते हैं। भारत में 6 लाख गाँव और 357 जिले हैं जिनमें प्रत्येक में प्रायः मेला लगता है।

इन मेलों में भी पंडों पुजारियों का ही अधिकार है। प्रायः हर मेला किसी न किसी तीर्थ स्थल, मजार देवालय, घाट पर ही लगता है। इन मेलों की ठेकेदारी और मालिकाना हवा इन पन्डों या जमीदारों का ही होता है? एक–एक मेले से 10–10 करोड़ रूपये की आय इन पन्डों की होती है (1) कुछ ऐसे मेले लगते हैं जिनमें व्यापार होता है उसके मालिक सेठ या जमीदार होते हैं। एक–एक मेले से एक–एक करोड़ रूपया हफ्ते की आय होती है। इन मेलों में करोड़ों रूपया धर्म–कर्म के नाम पर बरबाद किया जाता है। लगभग 50 करोड़ रूपए की प्रतिवर्ष कागज मिट्टी पत्थर के देवताओं की मूर्तियाँ ही खरीदी जाती हैं। इसमें 5 प्रतिशत अर्थात ढाई करोड़ कारीगर को मिलता है और साढ़े सैतालीस करोड़ वैश्य व्यापारी हजम कर लेता है। यहाँ कुछ देव स्थल व मेलों का ही वर्णन करेंगे।

साभार : डॉ. आंबेडकर
हिन्दुओं के वृत, पर्व और त्यौहार
पेज संख्या 171 से 186 तक
एस. एल. सागर

एलोरा-अजन्ता की गुफाएं

एलोरा और अजंता की गुफाओं मंदिर और मूर्तियों की चित्रकारी विश्व में प्रसिद्ध है। यह हिदुओं का प्रसिद्ध धार्मिक स्थल है। औरंगाबाद से एलोरा 30 तथा अजंता 99 कि.मी. दूर। एलोरा में 34 कंदराएँ हैं जिसमें अद्भुत नक्कासी युक्त खम्बे मूर्तियां और भित्तिचित्र है। जो हिन्दू संस्कृति की तस्वीर स्पष्ट सामने रख देते हैं यहां का कैलाश मंदिर बहुत प्रसिद्ध है। यह मंदिर 50 मीटर लम्बा 33 मीटर चौड़ा और 30 मीटर ऊँचा है। यह मंदिर एक बहुत विशालकाय चट्टान को काटकर बनाया गया है। अजंता एलोरा से 60 कि.मी. दूर है। यहां के चित्रों की कला देखते ही बनती है। एन एलोरा और अजंताओं की गुफाओं को इस प्रकार की आज बनाने में अरबों रूपया खर्च होगा। इनको बनाते समय धर्म और सिंहासन पर आसीन लोगों ने करोड़ो–करोड़ो कारीगर मजदूर लोगों के खून से सैकड़ों वर्षो में इनका निर्माण किया होगा। आज एक कारीगर मजदूर की छाया उनकी स्मृति इन गुफाओं के हर खम्बे और मंदिर के हर महराव पर बैठी है और उनके खून पसीने के सने श्रम से निर्मित इन गुफाओं और मंदिरों की व्यवासय का एक साधन बनाये बैठे करोड़ों रूपया प्रतिवर्ष ऐठने वाले पण्डे पुजारी लोगों को कोस रही है। इन मंदिर और गुफाओ में वार्षिक मेले तो लगते है पर यहां हर समय यात्रियों का मेला लगा रहता है। इनकी आय प्रतिवर्ष एक करोड़ रूपए से भी अधिक है और जनता का जो खर्च होता है वह 20 करोड़ रूपए से कम न होगा। खम्बों, मंदिरों एवं गुफाओं की दीवार नाना प्रकार के आसनों से वासना की आकृति में स्त्री पुरूष दिखाई देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि यह होता है कि जिस काल में मंदिर गुफाएं बनी होगी हिन्दू समाज वासना में लिप्त रहता होगा और यही उसका संस्कृति होगी। यहां के मंदिर धातु, सोना चांदी और हीरों से भरे पड़े हैं। भारत तो वह देश है जहां देवता का लिंग भी सोने से मढा जाता है। पाश्तात्य देशों को स्वच्छंद सभ्यता को बुरा कहने वाले हिन्दू जाकर अपना मुँह इन मंदिर और गुफाओं के सीसे में देखे तो उन्हे अपनी कच्छा विहीन तस्वीर स्वयं नजर आ जायगी। अजंता एलोरा की भांति ही पीतल खोड़ा की गुफाएँ दर्शनीय है। इन मंदिरों और गुफाओं में क्या नहीं होता देखने योग्य है। गुफाओं में उनके सामान्य कोनों में वासना में लिप्त कहीं भी स्त्री पुरूष का जोड़ा दिखाई दे सकता है। यहां जो देखता है वही करता है यहां के चित्रों को देखने के बाद कोई भी स्त्री पुरूष ऐसा नहीं बच सकता जो शाम को अपनी वासना तृप्त किए बिना सो जाए इसका पूरा प्रबंध भी पण्डों के यहां सर्वत्र कर रखा है। इसकी ओर से धर्मशाला, लाज, रेस्ट हाउस, होटल खोल रखे गए हैं। इनमें सुरा सुन्दरी का पूरा प्रबंध रहता है। यहां छटनी करके कोई सुन्दरी पसंद कर सकतें"। एक रात का 100 रू. से 1000 रूपये तक व्यय करना पड़ता है जैसा माल वैसा दाम। इसके अतिरिक्त सरकार ने रेस्ट हाउस और होलीडे कैम्प बना रखे हैं। अंग्रेजी स्टाइल के होटल भी हैं, जिनमें नंगा डांस देखने, माँसाहारी खाद्य एवं शराब का पूरा प्रबंध रहता है। काम वासना तृप्ति का पूर्ण प्रबंध रहता है।

साभार :
डॉ. आंबेडकर
हिन्दुओं के वृत, पर्व और त्यौहार
एस. एल. सागर

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

स्वतंत्रता के बाद : इतिहास की पुनरावृत्ति

जिन कारणों से हिंदू रणबांकुरे होने के बावजूद कदम कदम पर हारते रहे, वे कारण 1947 में स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात भी दूर नहीं हुए। हमारी मानसिकता उसी बिंदु पर जमी हुई है जिस पर हजारों वर्ष पूर्व थी। हम आज भी उसी तरह आत्मतुष्ट, असावधान और आग लगने पर कुआं खोदते हैं, जैसे हमारे पूर्वज करते थे। जैसे पिछले दो हजार वर्षों में विदेशी आक्रमणकारियों के मुकाबले में हम दब्बू मानसिकता के शिकार हो जाते थे, उसी तरह आज भी होते हैं, यही कारण है कि जम्मू कश्मीर में हम घुटने टेक देने को 'सद्भावना' रटे जा रहे हैं।

जम्मू कश्मीर में पाकिस्तान ने कई वर्षों से छद्म युद्ध छेड़ रखा है। हम केवल प्रतिरक्षा में जुटे है। ऐसे में यदि कोई युद्धबंदी या युद्धविराम कर सकता है तो वह पाकिस्तान है, क्योंकि युद्ध करने वाला ही युद्धबंदी कर सकता है, युद्ध का शिकार बनाया गया देश ऐसा नहीं कर सकता, परंतु हम ने अपनी तरफ से युद्धबंदी घोषित कर दी, जिसका अर्थ हुआ कि हम ने आत्मरक्षा के अपने अधिकार को भी खुद ही तिलांजलि दे दी।

यह दरअसल युद्धबंदी न हो कर आत्मरक्षाबंदी है, बंदूकबंदी है। यही कारण है कि हमारी इस तथाकथित युद्धबंदी के बाद स्थिति बद से बदतर हुई। आतंकियों ने राजधानी दिल्ली के अति सुरक्षित क्षेत्र लालकिला में स्थित सैनिक मुख्यालय पर आक्रमण कर दिया और प्रधानमंत्री कार्यालय तक को उड़ा देने की धमकी दे दी।

यदि 28 नवंबर 2000 से 13 फरवरी 2001 तक के युद्धबंदी के बाद के काल की आतंकवादी घटनाओं की युद्धबंदी से पहले के तीन मास (11 सितंबर से 27 नवंबर, 2000 तक) की घटनाओ से तुलना करें तो कई तथ्य उभर कर सामने आते हैं। युद्धबंदी से पहले के काल में 224 सुरक्षाकर्मी आहत हुए, 156 नागरिक मरे, 220 नागरिक आहत हुए, 437 आतंकी मरे और 190 गिरफ्तार किए गए, 245 नागरिक मरे, 415 नागरिक आहत हुए, केवल 190 आतंकी मरे और 72 गिरफ्तार किए गए।

ये आंकड़े किसी व्याख्या के मुहताज नहीं हैं। जरा सी सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति भी इस तथाकथित युद्धबंदी को आत्महत्यात्मक कदम ही कहेगा, परंतु हम इस पिटते और मरते जाने की प्रक्रिया को भी आत्मश्लाघा से आभा मंडित किए जा रहे हैं– अमुक देश ने हमारे युद्ध विराम को सही कहा है, फलां देश ने इसे उचित ठहराया है।

अमुक या फलां देश का कोई पिटता या मरता नहीं, अतः 'सही' या 'उचित' कहने पर उस का कुछ जाता नहीं। परंतु जिस देश के लोग पिट व मर रहे हैं, उसे अपने दिमाग से सही या गलत का निर्धारण करना होता है पर हम ऐसे हैं कि गले पड़े ढोल को भी बजाने से बचते हैं।

इसीलिए हम ने पहले 27 नवंबर 2000 को युद्धबंदी की, फिर एक माह के बाद उसे 26 जनवरी तक बढ़ा दिया, हालांकि इन 60 दिनों में 195 बेकसूर नागरिक और 122 सुरक्षाकर्मी जान से हाथ धो बैठे। इसे बाद में फिर 26 फरवरी तक बढ़ाया गया। 22 फरवरी को इसे मई के अंत तक बढ़ा दिया गया, अर्थात लातों के भूतों को बातों से मनाने के प्रयास से भी आगे जा कर हम उन्हें आश्वासन देते हैं कि आओ, लातें मारो, हम आप की मुट्ठी चापी करेंगे।

यह सहमी हुई दब्बू मानसिकता की ही अभिव्यक्ति है। इसी मानसिकता के चलते हमने 1947 में आधा देश तश्तरी में रख कर जिन्नाह को दे दिया था।

यदि हम 1947 के बाद के युद्धों का विश्लेषण करें तो यही तथ्य सामने आता है कि हम उस सड़ीगली मानसिकता, सांस्कृतिक दुष्प्रभाव और उन दोषों से मुक्त नहीं हो पाए हैं जो भूतकाल में हमारे पैरों में बेड़ियां डलवाने के लिए उत्तरदायी थे

1947 में कश्मीर पर आक्रमण

22 अक्टूबर, 1947 को कबाइलियों के भेष में पाकिस्तानी सेना ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। भारत सरकार के हाथ पैर फूल गए। परिस्थिति की मांग के अनुरूप दृढ़ इच्छा शक्ति और साहस कहीं दिखाई नहीं दिया। सरदार पटेल ने वायुयान द्वारा भारतीय सेनाएं 27 अक्टूबर को श्रीनगर भेजीं।

फलतः प्राचीन नगर और दूसरे कुछ इलाके पाकिस्तान के फंदे में पड़ने से बच गए, परंतु दब्बू मानसिकता फिर आड़े आई। सारे कश्मीर को मुक्त करवाने के स्थान पर हम 1 जनवरी, 1948 को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् तक सरपट भागे गए और गिड़गिड़ा कर पाकिस्तान के आक्रमण की शिकायत करने लगे।

सुरक्षा परिषद ने 13 अगस्त, 1948 को एक प्रस्ताव पारित करके ईंट कुएं में फेंक दी। भारत आज तक पाक अधिकृत कश्मीर को वापस नहीं ले सका है। इस तरह स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ महीनों के अंदर ही हारों की दास्तान फिर से लिखी जानी शुरू हो गई।

1962 में चीनी आक्रमण

चीन ने भारतीय क्षेत्रों पर अपने दावे 1954 से ही शुरू कर दिए थे। प्रधानमंत्री नेहरू पंचशील का पाठ करते रहे परंतु चीनी पंचशील के ढोंग में विश्वास व्यक्त करने के बावजूद व्यवहार में इस के विपरीत आचरण करते रहे। जून 1954 में चीनी प्रधानमंत्री जो–इन लाई ने भारत यात्रा के दौरान पंचशील की बात दोहराई थी परंतु इसके कुछ ही सप्ताह बाद चीनी सरकार ने उत्तर प्रदेश के बाराहोती क्षेत्र में भारतीय सेना की उपस्थिति पर आपत्ति जताना शुरू कर दिया था।

जून 1955 में बाराहोती के मैदान में चीनी सेना के कैंप लगा लिया और सितंबर में वे निति दर्रे के दक्षिण में दमजान तक दस मील और बढ़ आए। अप्रैल 1956 में उत्तर प्रदेश के निलांग क्षेत्र में सशस्त्र चीनी दल ने घुसपैठ की। इसके बाद भी घुसपैठ की दोतीन घटनाएं हुईं।

अक्टूबर 1957 में नेफा के लोहित डिवीजन में स्थित वालौंग में चीनियों ने घुसपैठ की। इसके बाद भी ऐसी घटनाएं होती रहीं, परंतु हमारे प्रधानमंत्री नेहरू और रक्षामंत्री कृष्णामेनन हमेशा यही रटते रहे कि कि चीन भारत पर कभी आक्रमण नहीं करेगा क्योंकि गुप्तचर एजेंसियां ऐसी ही सूचनाएं उपलब्ध करा रहीं थीं। (यह कहना कठिन है कि गुप्तचर एजेंसियां यथार्थ सूचनाएं दे रहीं थीं या ऐसी कल्पित सूचनाएं जिन्हें पाकर सत्तारूढ़ लोग प्रसन्न होते)

नेहरू और मेनन को यह विश्वास था कि चीन हमारी पांच या छः आदमियों वाली छोटी चौकियों पर भी आक्रमण नहीं करेगा। इसलिए वे चीन की तरफ छोटी–छोटी चौकियां बनाने को ही प्रोत्साहन देते रहे। परंतु चीन ने 20 अक्टूबर 1962 को पूर्ण और जबरदस्त आक्रमण किया और पश्चिमी सैक्टर में लद्दाख के चिपचैप इलाके को अपने अधिकार में कर लिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने 2500 वर्गमूल और भारतीय क्षेत्र को अपने कब्जे में कर लिया। कुछ मिला कर 14500 वर्गमील इलाका उन्होंने हथिया लिया।

चीनियों ने अपनी सेनाओं को फिर से मिलाकर नवंबर 15 ये 19 तक पुनः जबरदस्त आक्रमण किया और बहुत बड़ी संख्या में भारतीय सैनिकों को बंदी बना लिया। 21 नवंबर को चीन ने सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इलाकों को हथिया लेने के बाद एकतरफा युद्धविराम की घोषणा कर दी। अब वह लगभग 50,000 वर्ग मील भारतीय क्षेत्र पर दावा करने की स्थिति में आ चुका था। आज भी हम सारा क्षेत्र चीन से मुक्त नहीं करवा पाए हैं, परमाणु धमाकों का शोर मचा कर अपनी पीठ थपथपाने के बावजूद।

जिस तरह भूतकाल में हिंदू विदेशी आक्रमणों के प्रति असावधान रहे, उसी तरह वे चीनी आक्रमण के समय भी थे। सेना के मुख्यालय ने अप्रैल 1961 में रक्षा मंत्रालय को एक नोट भेजा था जिस में अन्य बातों के अलावा यह भी कहा गया था कि यदि चीन ने भारत में शक्तिशाली घुसपैठ करने की कोशिश की तो भारतीय सेनाएं उसे रोकने में समर्थ नहीं होंगी।

नोट में कहा गया था कि हमारे पास घटिया साजोसामान है, पुरानी किस्म के हथियार हैं तथा कामेंग डिवीजन में भारतीय सेनाओं के आने जाने के लिए आवश्यक सड़कों का अभाव है। परंतु इन बातों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया गया।

जब चीन ने आक्रमण किया तो जो सेना उसका मुकाबला कर ने के लिए भेजी गई। उसके पास घटिया किस्म का साजोसामान था। उसके पास .303 की राइफलें थीं। और तो और, उनके पास सर्दी का मुकाबला करने के लिए उचित कपड़े भी नहीं थे। करगिल आपरेशन के दौरान भी यही बात देखने को मिली। पाकिस्तानी घुसपैठियों के पास बढ़िया किस्म की वर्दियां थीं जो बर्फानी क्षेत्रों के बिलकुल उपयुक्त थीं जबकि हमारे वीर सैनिकों के पास वैसा कुछ भी नहीं था।

नेहरू और कृष्णामेनन के चहेते दोस्त सोवियत रूस तक ने भारत की सहायता करने से इनकार कर दिया, जबकि हम हमेशा से उसका चरण चुंबन करते रहे केवल संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने चीन से लोहा लेने के लिए युद्ध सामग्री तुरंत हवाई जहाज से भेजी इसके बावजूद हमने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका को चुनचुन कर गालियां दी, तिरस्कार किया, बजाय इसके कि हम उसके मित्र बनते जिसने हमारी सहायता की।

इसके विपरीत पाकिस्तान ने अमेरिका का साथ दिया। इस कारण वर्षों तक पाकिस्तान ने मुफ्त सेना सामग्री प्राप्त की जबकि भारत ने हर साजोसामान रूपए खर्च करके रूस से खरीदा।

हथियारों के मामले में जैसी स्थिति 1526 में पानीपत के प्रथम युद्ध के दौरान थी लगभग वैसी ही स्थिति चीनी आक्रमण के समय थी। पानीपत के मैदान में हमारे सैनिक बांस के डंडे और जंग लगी तलवारें लेकर लड़ रहे थे परंतु बाबर के पास बंदूकें व तोपें थीं जो बहादुर राजपूतों के परखचे उड़ा रही थीं।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि हमारे पास उच्चस्तरीय युद्ध सामग्री का ही अभाव नहीं रहा, बल्कि हमारी सेनाओं का मनोबल भी प्रायः युद्ध का नहीं रहा, उन्होंने हमेशा अफरातफरी में युद्ध किया। एक विश्लेषक ने टिप्पणी की है कि यदि युद्धकालीन समाचारों पर गौर किया जाए तो उनकी वीरता का पता चलता है कि वे बहादुरी के साथ पीछे हटीं, (आगे नहीं बढ़ीं)।

चीनी आक्रमण के समय तरह–तरह की बातें सुनने को मिलती थीं, कई तरह की अफवाहें थी, कोई कहता जब चीनियों ने चौकियों पर हमला किया, तब भारतीय सैनिक बंदूकें छोड़कर जंगलों में भाग गए, कोई कहता फलां फौजी अफसर साबुन का घोल पीकर और टट्टियां लगने की बीमारी का बहाना बनाकर मोर्चे से हट गया।

मेजर जनरल जोगिंदर सिंह ने अपनी किताब 'बिहाइंड द सीनः एन अनैलसिस ऑफ इंडियाज मिलिट्री आपरेशंस 1947–71' में लिखा है कि उन दिनों यह अफवाह भी थी कि जनरल कौल को बंदी बना लिया गया है। इस बारे में सही जानकारी लेने के उद्देश्य से जब अमेरिका के तत्कालीन राजदूत ने राष्ट्रपति राधाकृष्णन से पूछा कि क्या जनरल कौल बंदी बना लिए गए हैं तो कहा जाता है कि उन्होंने उत्तर दिया था, ''दुर्भाग्य से यह असत्य है''। इस तरह की अफवाहों से भारतवासियों व

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

सशस्त्र सेनाओं के मनोबल पर किस तरह का प्रभाव पड़ा होगा–यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है।

भारतीय सैनिक जिस तरह के मानसिक दबाव के अधीन मध्यकाल में विदेशी आक्रमणकारियों से लड़ता था, 1962 में भी वह चीनियों के विरूद्ध उसी स्थिति में जूझा। जिस तरह मध्यकाल में नेतृत्व की दरिद्रता हमारी हारों का कारण बनी, उसी तरह '62' में, हर बार अपनी अकुशलता, उदासीनता और असावधानी का कोई न कोई बहाना ढूंढ़ा गया। '62' में भी नेतृत्व अपनी व्यक्तिगत पसंदनापसंद को हठधर्मिता की सीमा तक पकड़े रहा और इसे नीतिमत्ता का नाम दिया गया।

यह बात सयाने लोग बहुत पहले लिख गए है कि 'कातर्यं केवला नीति' (केवल नीति की बातें कायरता का दूसरा नाम है)। सद्भावना अपनी जगह ठीक है, परंतु संभावित शत्रु के प्रति असावधानी को सद्भावना का नाम देना बिलकुल गलत है। यदि दूसरा भी ईमानदारी व सद्भाव दिखाए तब तो हमारी सद्भावना सद्गुण हो सकती है, परंतु दूसरे से घोखा खाते जाना और सद्भाव का झुनझुना बजाते फिरना, वीर सावरकर के शब्दों में, 'सद्गुण–विकृति' है। पृथ्वीराज इसी विकृति के कारण एक हजार वर्ष पूर्व मरा था। 1962 में नेहरू और मेनन ने वही कुछ दुहरा दिया। इतिहास से सबक नहीं सीखा। हिंदू मानसिकता वैसी की वैसी ही बनी रही।

1965 में पाकिस्तानी का पुनः आक्रमण

1965 में पाकिस्तान ने भारतीय कश्मीर में अपने घुसपैठिए भेजने शुरू किए। अगस्त 1965 में 1200 सशस्त्र पाकिस्तानी घुसपैठिए भारत की सीमा के 42 मील अंदर तक घुस आए थे। कुछ ही दिनों में इनकी संख्या 3000 तक पहुंच गई थी। सितंबर में पाकिस्तान ने पैटन टैंकों के साथ छंब सैक्टर में पूरी तरह से आक्रमण कर दिया।

फलस्वरूप भारत ने स्यालकोट और लाहौर सैक्टरों ने नए मोर्चे खोल दिए, परंतु भारत के ये प्रति–आक्रमण जल्दबाजी में किए गए, अलग–अलग स्थानों से सेना की इकाइयों को इकट्ठा किया गया।

जब आक्रमण का समय आया तब अंधेरा हो चुका था, यूनिट कमांडरों से कहा गया कि हल्ला बोल दो, जबकि उन्होंने अपने लक्ष्यों को दिन की रोशनी में देखा तक नहीं था, उनके द्वारा अपने सहकमांडरों को वे लक्ष्य दिखाने की तो बात ही छोड़िए।

परिणाम वही होना था जो हुआ, ज्यादातर आक्रमण असफल रहे बहुत से यूनिट कमांडरों से उनके पद छीन लिए गए और उन्हें पदावनत कर दिया गया। यहां तक कि कुछ ब्रिगेड कमांडरों की भी पदावनति हुई। तबेले की बला बंदर के सिर मढ़ दी गई।

लाहौर सैक्टर में अग्रसर हो रही डिवीजन के जी.ओ. सी. (जनरल आफिसर कमांडिंग) को पहली दो डिवीजनों से बदला गया था। यह एक बड़ा विचित्र संयोग था, क्योंकि ऐसा भारतीय सेना में पहले भी नहीं हुआ था। इसीलिए वह जी.ओ.सी. अपनी कमांड को सफलतापूर्वक नहीं चला सका।

जब एक साहसी इनफैंट्री बटालियन ने इच्छोगिल नगर को बड़ी कठिनाई से पास करने में सफलता प्राप्त की और डोगराई गांव को अपने कब्जे में कर लिया, तब भी इस सफलता का दोहन नहीं किया जा सका, क्योंकि इस नहर के पास की व्यूह रचना ने एक सुदृढ़ आधार स्थापित नहीं होने दिया। हमारी बढ़त को वहीं रोक दिया गया। यदि इस बाधा को पार करने की अग्रिम योजना बनाई गई होती तो शायद स्थिति और होती।

उधर पाकिस्तान ने छंब सैक्टर में अखनूर पुल को हथियाने के उद्देश्य से एक और मोर्चा खोल दिया। यहां हमें पाकिस्तान के इशारों पर नाचना पड़ा और इस सैक्टर की प्रतिरक्षा की उपेक्षा हुई क्योंकि हमने पाकिस्तान की तरफ से पैदा होने वाले खतरे का गलत मूल्यांकन किया था। हमारे इस सैक्टर में केवल एक ब्रिगेड ग्रुप था जिसके पास हलके टैंकों का एक दस्ता था।

पाकिस्तान ने एक डिवीजन और दो मीडियम टैंक रेजीमेंटों के साथ आक्रमण किया और हमारी ब्रिगेड द्वारा दृढ़ता से मुकाबला करने के बावजूद उसकी बढ़त बन गई। अब हमने और कुमुक भेजी जब कि यह पहले भेजी जानी चाहिए थी। वहां डिवीजन कमांडर जनरल चोपड़ा को तैनात किया गया परंतु वहां डिवीजनल मुख्यालय न होने के कारण छंब सैक्टर की गतिविधियों में वह तालमेल स्थापित नहीं कर सकता था।

पाकिस्तान ने अपनी थल सेना और वायुसेना को गुणवत्ता की दृष्टि से मजबूत किया था जब कि हमने संख्या को ज्यादा महत्व दिया था। पाकिस्तानी सेना के पास नवीनतम टैंक और बंदूकें/तोपें थी, जबकि भारतीय सेना की इनफैंट्री की बढ़िया किस्म की थी। पाकिस्तानी वायु सेना अपने सैनिकों को हमारी वायु सेना की तुलना में कहीं ज्यादा बढ़िया संरक्षण दे रही थी।

हमारे यहां उच्च स्तर पर उचित योजना का अभाव रहा, क्योंकि पाक के अचानक आक्रमण से यहां तो हाथपैर फूल गए थे। सब काम बिना योजना के और अफरातफरी में हो रहा था।

1965 में अपनी पराजय पर परदा डालने के लिए भारतीय थल और वायु सेनाओं ने एक दूसरे पर जम कर दोषारोपण किया था। थल सेना का कहना था कि वायु सेना ने उसे अपेक्षित सहयोग नहीं दिया। जबकि वायु सेना के अधिकारियों का कहना था कि थल सेना युद्ध में विजय (?) का श्रेय स्वयं ही लेना चाहती थी, ''इसलिए उस ने प्रत्याक्रमण करने से पूर्व हम से कोई सलाहमशविरा नहीं किया।'' जैसा कि 'मार्शल ऑफ दि इंडियन एयर फोर्स' की उपाधि से विभूषित अर्जन सिंह ने 'इंडियन एक्सप्रेस' (10 फरवरी, 2002) को दी गई विशेष भेंटवार्त्ता में रहस्योद्घाटन किया है, ''सितंबर 1965 को पाकिस्तानी सेना ने जब छंब पर आक्रमण किया था, तब भारतीय थल सेना अकेली ही लड़ती रही। सूर्यास्त से केवल एक घंटा पहले जनरल चौधरी हमारे पास वायु सेना का सहयोग मांगने आए।''

क्या इससे से यह संकेत नहीं मिलता कि स्वतंत्रता के बाद भी हम आपसी फूट के शिकार हैं? अन्य क्षेत्रों को छोड़िए, सैन्य क्षेत्र में भी थल और वायु सेनाओं में समुचित तालमेल नहीं है।

जब संयुक्त राष्ट्र द्वारा युद्ध विराम की बात चली तब, के सुब्रह्मण्यम के शब्दों में ''प्रधानमंत्री ने सेनाध्यक्ष से पूछा कि यदि भारत कुछ दिन और युद्ध जारी रखे तो क्या ठीक नहीं होगा? इस पर उस आपातकालीन बैठक में उपस्थित लोगों का कहना है कि सेनाध्यक्ष का उत्तर था कि सेना के पास गोलाबारूद की कमी हो रही है। अतः युद्धविराम ही उचित रास्ता है।'' लेकिन, श्री सुब्रह्मण्यम् का कहना है कि बाद में जब खर्चे गए गोलाबारूद का मूल्यांकन हुआ तो पाया गया कि 10% से ज्यादा गोलाबारूद इस्तेमाल नहीं हुआ था।

यदि यह सत्य है तो सेनाध्यक्ष ने गोलाबारूद की कमी की बात क्यों की होगी, इस का कोई संतोषजनक कारण हमें ढूंढ़ना होगा।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि 1965 के युद्ध में भारत निर्णायक विजय हासिल नहीं कर सका। इसीलिए लगता है कि इच्छोगिल नहर के पास पैदा हुए गतिरोध से विवश होकर, न कि गोलाबारूद की कमी के फलस्वरूप, हमने युद्धविराम को स्वीकार करना ही श्रेयस्कर समझा। नेतृत्व ने अपनी कमजोरी गोलाबारूद की कथित कमी के सिर मढ़ दी।

जो इलाके भारतीय सेनाओं ने प्राणों की बाजी लगाकर अपने कब्जे में लिए थे, वे समझौते की मेज पर लौटा दिए गए। इस समझौते की विपरीत शर्तों के परिणामस्वरूप ही प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री का उसी रात देहावसान हो गया और हम सब कुछ करने के बाद भी खाली हाथ रह गए।

इस युद्ध ने एक बार फिर हमारी मध्यकालीन अकर्मण्यता को ही उजागर किया। शत्रु की गतिविधियों पर आंख नहीं रखी गई और जब हमला हो ही गया तब अफरातफरी में काररवाई की गई और विवश हो कर युद्धविराम स्वीकार कर लिया गया। पाकिस्तान का असावधान भारत पर हमला अब्दाली द्वारा असावधान मराठों पर (पानीपत की तीसरी लड़ाई के दौरान) किए हमले की पुनरावृत्ति मात्र प्रतीत होता है।

1971 की भारतपाकजंग

1971 की पाकिस्तान भारत जंग निस्संदेह एक ऐसी घटना थी, जिसे 'विशुद्ध' भारतीय विजय कहा जा सकता है। परंतु यह केवल हमारी सेनाओं की रण कुशलता के कारण संभव नहीं हुआ बल्कि यह अन्य उपादनों का भी परिणाम था। यदि तत्कालीन पाकिस्तान की भौगोलिक स्थिति पर नजर डालें तो कई तथ्य स्पष्ट होते हैं जो किसी व्याख्या की अपेक्षा नहीं रखते।

1971 में जो बंगलादेश बना, वह उससे पूर्व 'पूर्वी बंगाल' कहलाता था और शेष पाकिस्तान 'पश्चिमी पाकिस्तान' पूर्वी बंगाल की भौगोलिक स्थिति ऐसी थी–ढाका, स्थल मार्ग से लाहौर से लगभग 1100 मील दूर पड़ता था और समुद्री रास्ते से कराची और चिटगांव के बीच का फासला 3500 मील से अधिक था। इस प्रकार भौगोलिक दृष्टि से पूर्वी बंगाल का पश्चिमी पाकिस्तान के साथ कोई संबंध नहीं जुड़ता था। संसार के किसी भी एक देश के दो भाग एक दूसरे से इस प्रकार कटे हुए नहीं मिलते।

सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से भी पूर्वी बंगाल का पश्चिमी पाकिस्तान से कोई मेल नहीं था। पूर्वी बंगाल का सामाजिक जीवन, रहन–सहन, खानपान आदि भारत में स्थित पश्चिमी बंगाल से पूरी तरह मिलता था, केवल पूजाविधि का अंतर था।

पूर्वी बंगाल में बहुसंख्या उन लोगों की थी जिनके पूर्वजों ने एक समय अपना धर्म परिवर्तन किया था, लेकिन यह धर्म परिवर्तन न तो स्वेच्छा से किया गया था और न इस्लाम की किसी प्रकार की श्रेष्ठता से प्रभावित होकर, अधिकतर लोगों ने काला पहाड़, जो स्वयं एक ब्राह्मण युवक था और जिसे ब्राह्मणों की अदूरदर्शिता ने इस्लाम स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया था, के प्रतिशोधात्मक दबाव के कारण इस्लाम में प्रवेश किया था।

इससे उनकी पूजाविधि तो बदल गई थी परंतु अन्य सभी बातों में वे हिंदू समाज का ही अंग बने रहे, उनकी भाषा, वेशभूषा, रीतिरिवाज, कला और कल्पना, समाज रचना और सामाजिक बंधन लगभग समान बने रहे। इन 'विभीषणों' की भूमिका ने भारतीय सेनाओं को विजयी बनने में पर्याप्त मदद की। यदि ये न होते तो शायद युद्ध का परिणाम भी दूसरा होता।

इसी कारण पूर्वी बंगाल और पश्चिमी पाकिस्तान के हितों और आकांक्षाओं में देश विभाजन के समय से ही कभी तालमेल नहीं बैठा। पाकिस्तान की संविधान सभा में पूर्वी बंगाल से चुनकर आए प्रतिनिधियों का बहुमत था, परंतु उनमें से बहुत से अन्य प्रांतों के ऐसे मुस्लिम लीगी नेता थे जिन्हे 1946 में पूर्वी बंगाल से चुनवाया गया था।

अतः पूर्वी बंगाल के प्रतिनिधि होते हुए भी वे उसकी अपेक्षा पश्चिमी पाकिस्तान से सहानुभूति रखते थे। पश्चिमी पाकिस्तान के प्रतिनिधि चाहते थे कि पाकिस्तान के नए संविधान के अंतर्गत संसद में पूर्वी बंगाल का प्रतिनिधित्व पश्चिमी पाकिस्तान के बराबर हो, उससे अधिक नहीं, परंतु पूर्वी बंगाल के लोग इसके लिए तैयार नहीं थे, क्योंकि उनकी जनसंख्या पश्चिमी पाकिस्तान से बहुत अधिक थी।

इस तरह स्पष्ट है कि विभाजन से पूर्व और बाद के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मानस के मद्देनजर पूर्वी बंगाल (बंगला देश) का पश्चिमी पाकिस्तान से एक समय पृथक होना स्वाभाविक और अनिवार्य सा

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

था। 1971 में पश्चिमी पाकिस्तान की सेना ने वहां जो अमानवीय अत्याचार किए, जो सामूहिक नरसंहार किए, जो अतिविशाल स्तर पर लूटपाट, चोरियां और डकैतियां डालीं, जो बलात्कारों व अन्य अनाचारों का तांडव नृत्य किया उसने पूर्वी बंगाल की पश्चिमी पाकिस्तान से पृथक होने की संभावना को उसी वर्ष एक वास्तविकता बना दिया।

इसीलिए हमूदर रहमान आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि पाकिस्तानी जनरलों द्वारा सत्ता के दुरूपयोग और लोगों पर किए गए अत्याचारों के कारण पूर्वी पाकिस्तान (पूर्वी बंगाल) हमसे छिना।

यदि पाकिस्तान की सेना और उसके अधिकारी लोभ, कुप्रबंध, कामवासना व दूसरी विकृतियों के शिकार न हुए होते तो शायद परिणाम कुछ और होते। पश्चिमी बंगाल की ओर से पाकिस्तानी सीमा में घुसी भारतीय सेना की दूसरी कोर की ब्रिगेड के नायक मेजर जनरल (उस समय ब्रिगेडियर) राजेंद्रनाथ ने कहा है कि पूर्वी पाकिस्तान में पास सेना के नायक जनरल नियाजी राजधानी ढाका को वस्तुतः सेना विहीन करके अपने सैनिकों को चारों ओर छितरा देने की वजय से मात खा गए।

इसी युद्ध में भाग लेने वाले एक अन्य वरिष्ठ सैनिक अधिकारी लैफ्टीनेंट जनरल हरबंस सिंह का कहना है कि यदि नियाजी ने 23 नवंबर से ही बढ़ती भारतीय सेनाओं के 5 दिसंबर तक चारों ओर से काफी भीतर तक बढ़ आने पर भी ढाका की चौतरफा, चारपांच व्यूहों पर आधारित, किलाबंदी कर ली होती तो हमारे लिए उसे तोड़ना बहुत ही मुश्किल होता। इस तरह नियाजी काफी लंबे समय तक युद्ध खींच सकते थे।

नियाजी ने 'द फ्राइडे टाइम्स' के साथ तक भेंटवार्त्ता (जनवरी, 2001) में कहा है कि मुझे याहिया खान ने आत्मसमर्पण के लिए कहा था, हालांकि मैंने लड़ने की इच्छा प्रकट की थी। पाकिस्तान के अंदर राष्ट्रपति याहिया खान, सत्ता के इच्छुक भुट्टो और बहुमत प्राप्त अवामी लीग के नेता शेख मुजीब रहमान में सत्ता प्राप्ति के लिए जो युद्ध चल रहा था, दरअसल उसी ने 1971 के युद्ध का निर्णय किया था।

लैफ्टीनेंट जनरल हरबंस सिंह ने भदूरिया की लड़ाई को भी भारतीय सेना की सामाजिक गलती माना है, यह अलग बात है कि 17वीं कुमाऊं रेजीमेंट के जांबाज सैनिक इस में विजयी हो गए। यदि परिस्थितियों पर नजर डालें तो स्पष्ट होता है कि यह लड़ाई एक तरह की आत्मघातात्मक लड़ाई थी। भदूरिया में धान के खुले खेतों में दुश्मन के कैंप पर दिन के उजाले में हमला किया गया। दुश्मन सुरक्षित बंकरों में था और भारतीय सैनिक धान के खेतों में।

कैप्टन चौहान के अनुसार रात में जब पाक सेना ने हमला बोल दिया तो और कोई चारा न देख कर हम ने अपनी तोपों को अपने ही ऊपर गोलाबारी करने के लिए कहा। यह महज एक संयोग है कि तोपखाने की भारी गोलाबारी से अधिक नुकसान पाक सेना को ही हुआ और इस तरह हम भदूरिया इलाके को जीत सके और भारत से ढाका की ओर जाने वाली मुख्य सड़क पर हमार कब्जा हो गया।

मेजर जनरल राजेंद्र नाथ और लैफ्टीनेंट जनरल हरबंस सिंह की स्वीकारोक्तियां व रहस्योद्घाटन हमारे इसी कथन की पुष्टि करते हैं कि शायद संयोगों के अभाव में युद्ध के परिणाम कुछ और होते। 1971 में अपनाई गई सैनिक नीति को अपना कर और तब ही हार का बदला लेने की भावना से प्रेरित होकर पाकिस्तान पिछले डेढ़ दशक से कश्मीर में छद्मयुद्ध चलाए हुए है जिसमें जन और धन की अपार क्षति हो रही है।

इसी तरह एक दशक तक वह पंजाब में करता रहा है। वहां भी जनधन की अपार क्षति हुई थी। यह जीत उन दिनों तो महंगी पड़ी ही थी जब एक लाख पाकिस्तानी सैनिकों को खिलाने पिलाने, रहने के लिए स्थान जुटाने और अन्य प्रबंधों पर बेतहाशा खर्च किया गया था और बिना किसी ठोस प्राप्ति के महीनों बाद उन्हें स्वदेश पहुंचा दिया था, अब भी महंगी पड़ रही। आई.एस.आई मुक्तिवाहिनी का ही प्रतिशोधात्मक रूप है। हमें इसके लिए तैयार रहना चाहिए था, मगर हम तो निश्चिंत होकर सोए रहे।

बंगला देश बनाकर हम ने कहा था कि हमारा शत्रु पाकिस्तान कमजोर पड़ गया है, अब हम सुख की सांस लेंगे, अब भारतीयों की बहुत सी समस्याएं हल हो गई हैं, परंतु इस दृष्टि से भी यदि विचार करें तो 1971 से अब तक हमें कोई विशेष लाभ हुआ दिखाई नहीं पड़ता, शेख मुजीब ने यद्यपि शुरूशुरू में धर्मनिरपेक्षता को महत्व दिया तथापि तीन सालों के दौरान ही उसने इससे हाथ झाड़ लिए।

फल यह हुआ कि उसके उत्तराधिकारी सैनिक तानाशाह इस्लाम को राजनीतिक उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल करते रहे। बंगलादेश में एक करोड़ 80 लाख हिंदू होने चाहिए थे परंतु अब वहां लगभग एक करोड़ 10 लाख ही रह गए हैं। 70 लाख हिंदू कहां हैं? और जहां हैं वहां क्यों हैं?

1965 की भारतपाक जंग के दौरान पाकिस्तान ने शत्रु संपत्ति अधिनियम बनाया था जिसके तहत पलायन कर जाने वाले हिंदुओं की संपत्ति सरकार के कब्जे में आ जाती थी। बंगला देश सरकार ने इस कानून का केवल नाम बदला और 'शत्रु' के स्थान पर 'न्यस्त/निहित' शब्द रख दिया, पर इस कानून को उसी तरह बरकरार रखा। आज बंगलादेश के हिंदूगृहों का 40% और 2.1 मिलियन एकड़ जमीन इसके तहत सरकार के पास है। यद्यपि मानवाधिकार कार्यकर्ताओ, प्रख्यात वकीलों व राजनीतिक तथा जनसेवी व्यक्तियों ने इसे रद्द करने के लिए समय-समय पर आवाज उठाई है लेकिन इसे अवामी लीग की सरकार भी रद्द नहीं कर सकी है। इस तरह सरकार द्वारा हथियाई जा चुकी संपत्ति की कीमत बंगलादेश के सकल घरेलू उत्पाद को 70% के बराबर बैठती है।

आज भी खालिदा जिया की बंगलादेश नेशनलिस्ट पार्टी, जमाते इस्लामी और जनरल इरशाद की जीतोओ पार्टी भारत के विरूद्ध वह सब कुछ कहती व करती रहती है जो कुछ वह कह और कर सकती है। वर्षों तक बंगलादेशी सरकारों ने पानी के मुद्दे को जलता रखा, कभी बाढ़ का पानी भारत की ओर कर दिया तो कभी कुछ और किया। अब भी यह मामला पूरी तरह हल नहीं हुआ है, सूखे मौसम में पानी का बहाव बढ़ाने पर बराबर बल दिया जा रहा है।

भारत में जब भी कुछ होता है, उसकी प्रतिक्रिया बंगलादेश के हिंदुओं को झेलनी पड़ती है-चाहे 1989 में राम मंदिर का अयोध्या में शिलान्यास हो या 1992 में बाबरी मस्जिद का ध्वंस। धर्मांध लोगों ने 1989 में भी मंदिर जलाए व धराशायी किए और 1992 में भी। तसलीमा नसरीन की कृति 'लज्जा' इस सब का मुंह बोलता चित्र प्रस्तुत करती है। भारत द्वारा बंगलादेश बनाने के बावजूद वहां हिंदू पीड़ित है।

इसके साथ ही बंगलादेश की ओर से भारत में घुसपैठ होती रहती है जिससे कई इलाकों में जनसंख्या का संतुलन गड़बड़ा गया है। इस घुसपैठ के दौरान कई तरह के अवांछित तत्व भारत में अवैध रूप से प्रविष्ट होकर आए दिन नई समस्याओं को जन्म देते रहते हैं।

इसके विपरीत बंगलादेश स्वयं 'अंतरराष्ट्रीय भिखारी' से खाद्य पदार्थों के मामले में आत्मनिर्भर हो गया है, साक्षरता की दृष्टि से आगे बढ़ा है और गरीबी को कम करने में सफल हुआ है। उसका जन्मदाता भारत विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक अध्ययन के अनुसार 112वें स्थान पर खड़ा है, जबकि बंगलादेश 88वें स्थान पर है।

संदेह के बादल कभी छंटते हैं तो कभी फिर उमड़ पड़ते हैं। कुछ समय पहले पश्चिम बंगाल के पूर्व मुख्यमंत्री ज्योतिबसु के अभिनंदन के लिए आयोजित एक समागम में बंगलादेश के विदेश मंत्री अब्दुल समाद आजाद मंच पर सजे हुए थे और समागम भारतीय जनता पार्टी और इसके सहयोगी दलों (एन.डी.ए.) पर राजनीतिक आक्रमण के रूप में बदल गया था। इस तरह के कदम/घटनाएं आपसी संबंधों से संदेहों को कब दूर कर पाएंगी?

जब भारत में राम मंदिर का निर्माण शुरू होगा, जिसे प्रधानमंत्री वाजपेयी ने 'राष्ट्रीय आकांक्षा' कहा है, तब फिर बंगलादेश का निर्दोष हिंदू अत्याचारों, आतंक और प्रताड़ना का शिकार होगा। इस देश के अति सक्रिय तत्वों के अपराधों का दंड वहां के निरीह व निर्दोष हिंदुओं को भुगतना पड़ेगा। वे जब पाकिस्तान में थे तब भी पिटते थे, और अब जब वे हमारे द्वारा सृष्ट बंगलादेश में हैं तब भी पिटते हैं, जब से बेगम खालिदा जिया सत्ता में आई हैं, हिंदुओं का हिंदू होने के अपराध के कारण योजनाबद्ध ढंग से उत्पीड़न जोरों पर है और वे पलायन करके भारत में शरण ढूंढने के लिए विवश हैं। यह हमने शत्रु को कमजोर बनाया है, या नया रक्तबीज पैदा कर लिया है?

करगिल कांड

1999 में भारतीय जनता पार्टी के नेता अटल बिहारी वायपेयी की सरकार के दौरान करगिल संघर्ष में विजय के उपलक्ष्य में पर्याप्त आत्मश्लाघा देखने को मिली। परंतु प्रश्न यह है कि क्या 2000 करोड़ खर्च और कम से कम 470 बहादुरों का बलिदान हमारी उसी तरह की गलती का परिणाम नहीं है जिस तरह की गलतियां अतीत में की जाती रहीं हैं?

प्रधानमंत्री वाजपेयी सद्भावना की बस लेकर पाकिस्तान पहुंचते हैं तथा चारों ओर 'सब अच्छा है' की गूंज सुनाई देती है, हम आत्मतुष्ट हैं। परंतु नवंबर 1998 से ही बटालिक में घुसपैठ शुरू हो जाती है। पक्की मोर्चाबंदी हो जाती है और शत्रु सामरिक महत्व की चोटियों पर मोर्चे संभाल लेता है। हमें पता नहीं चलता-अप्रैल 1999 तक इसकी बाबत न रक्षा मंत्रालय के असैन्य या सैन्य विंग से पता चलता है, न फारूख अब्दुल्ला सरकार के गुप्तचर माध्यमों से, पता चलता है तो गड़रियों से, जैसा लोक कथाओं में सुनते हैं।

सद्भावना अपनी जगह बिलकुल ठीक है, परंतु दूसरा भी यदि इस सच्चे मन से स्वीकार करे तभी तक यह एक सद्गुण है। यदि दूसरा हमारे सद्भावना अभियान को हमारा ही 'राम नाम सत्य है' करने के लिए प्रयुक्त करे तो यह 'सद्गुण की विकृति' है।

हम अतीत में अनेक बार इस के शिकार हुए हैं। विदेशी आक्रमणकारी हमारे पूजास्थलों को नष्ट करते रहे, हम उनके पूजास्थलों को अपने पूजास्थलों के समान पूज्य ठहराते रहे, वे हमारी बहू बेटियों का असभ्यतापूर्वक अपहरण करते रहे, हन उनकी अपने हाथ लगी औरतों को ससम्मान उनके यहां पहुंचाते रहे और वे हमें जो कुछ झूठ में भी कह देते, हम उसे सत्यवचन मानकर उन के हाथों पिटते रहे। इस तरह हमारे सद्गुण ही हमारे अवगुण बनते रहे।

1992 में गोरी ने पृथ्वीराज के संधि के प्रस्ताव के उत्तर में कहा था कि मैं इस बारे में अपने भाई से पूछ कर सूचित करूंगा। सद्भाव संपन्न राजपूत इतने से ही संतुष्ट हो कर असावधान हो गए। गोरी ने सुबह तड़के ही हमला बोल दिया, फिर क्या था? पृथ्वीराज की सेना गोरी ने संख्या में अधिक होते हुए भी पराजित हुई और स्वयं सम्राट बंदी बनाकर बाद में मौत के घाट उतार दिया गया।

साभार :
हिंदू इतिहास हारों की दास्तान
पेज संख्या 141 से 177 तक
डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा 'अज्ञात'

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

अपने अंतिम बसेरा को ही आर्यों ने तीर्थ–स्थल घोषित किया

यह देखने को मिलता है कि अधिकांश प्राचीन हिन्दू तीर्थ स्थल गंगा यमुना नदी के आस–पास के क्षेत्रों में ही स्थित है। वाराणसी, इलाहाबाद, हरिद्वार, अयोध्या, काशी, प्रयाग, मथुरा आदि हिन्दुओं के प्राचीन तीर्थस्थल हैं। इनके महात्म्य का वर्णन पौराणिक कथाओं में भी बढ़–चढ़कर आया है। इतना ही नहीं, इन तीर्थस्थानों में जो पंडे होते हैं उनके पास, खास कर उत्तर भारत के हिन्दू यजमानों की कई पीढ़ी की वंशावली भी रहती है। प्रत्येक पंडा किसी निश्चित क्षेत्र के लिए अधिकृत होता है और उस क्षेत्र का यजमान उसी पंडे के पास पहुँचता है। यद्यपि आजकल पंडे दलालों का प्रयोग कर दूसरे के यजमानों को भी अपने बिछाये जाल में फँसा लेते हैं।

इस सब बिन्दुओं पर विवेचना करने से स्पष्ट पता चलता है कि ऐसा होने का संबंध आर्य ब्राह्मणों के भारत आक्रमण के बाद उनके विस्तार और विकास से है। ईसा पूर्व 2500 में आर्य ब्राह्मण ईरान से भारत की तरफ प्रस्थान कर चुके थे। अफगानिस्तान होते हुए भारत की सीमा में ये ईसा पूर्व 1500 में प्रवेश किया, अर्थात् ईरान से भारत तक पहुँचने में उन्हें 1000 वर्ष लग गये। भारत पहुँचने के 300 वर्ष बाद ईसापूर्व 1200 में वसिष्ठ, भारद्वाज और विश्वामित्र जैसे वैदिक ऋषियों ने ऋग्वेद के मंत्रों का सृजन करना प्रारम्भ कर दिया। आर्य ब्राह्मण गंगा–यमुना के मैदानी भाग तक पहुँचते–पहुँचते ऋग्वेद लगभग पूरा कर चुके थे।

यहाँ उल्लेखनीय है कि आर्य–ब्राह्मणों ने रूस के वोल्गा से गंगा तक का सफर चार चरणों में पूरा किया। अर्थात् इन्होंने चार ठहरावों का प्रयोग किया, जिसमें से एक ठहराव भारत के बाहर था और तीन ठहराव भारत के अन्दर। भारत के बाहर जिन ठहरावों का इस्तेमाल आर्य लोगों ने किया, वह था ईरान। ये यहाँ काफी काल तक रहे होंगे, क्योंकि वर्तमान भारत में अधिकांश सभ्यता संस्कृति ईरान से ही आयातित है। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार ईरानी ग्रंथ जेन्द अवेस्ता और भारतीय ऋग्वेद में काफी समानता है। इसका मतलब है कि ऋग्वेद में ईरानी सभ्यता संस्कृति की ही झलक है बाद में ईरानियों ने जेन्द अवेस्ता की रचना कर वहाँ के समाज, संस्कृति और सत्ता का वर्णन किया। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ धर्मानन्द कोसाम्बी वैदिक संस्कृति को बेबीलोनियन संस्कृति की उपज मानते हैं, क्योंकि बेबीलोनियन संस्कृति सुमेरियन संस्कृति से बनी है और सुमेरियन लोगों का मूल वासस्थान मध्य एशिया है। चूँकि आर्यों का भी मूल वासस्थान मध्य एशिया ही है, अतः दोनों में काफी समानता है।

आर्य ब्राह्मण भारत के अन्दर जिन पड़ावों या ठहरावों का इस्तेमाल किये उसमें पहला पड़ाव था अफगानिस्तान, दूसरा पंजाब और तीसरा पड़ाव गंगा–यमुना का उर्वर मैदान भाग। प्रथम आर्य–अनार्य संघर्ष आर्य ब्राह्मणों के प्रथम पड़ाव अफगानिस्तान में ही ईसा पूर्व 2500 में हुआ था। वहीं पर इन्द्र (आर्यों के अधिपति) के चुनाव की परिपाटी की शुरूआत हुई। पुरहुत प्रथम इन्द्र था। आर्य ब्राह्मणों का दूसरा बसेरा पंजाब था, जहाँ पर अतिविकसित प्राक्वैदिक हड़प्पा नगर का खुदाई में पता चला है। यहाँ पर कोई प्रभावशाली आर्य समुदाय रहा होगा जिस कारण हड़प्पा का नाम ऋग्वेद में 'हरिपुरिया' के रूप में उल्लेख हुआ है। इनका भारत में तीसरा और अंतिम पड़ाव गंगा यमुना का मैदानी भाग था। इन नदियों के आस–पास के क्षेत्रों में इनका स्थायी वास हुआ, जिस कारण ये अपने पूर्व निवास स्थान (रूस के वोल्गा क्षेत्र और ईरान) की सभ्यता, संस्कृति और धर्म को इन्ही क्षेत्रों में सबसे अधिक स्थापित और प्रचारित करने में कामयाब हुए। इन स्थानों को धार्मिक महत्व से जोड़कर इसे पवित्र बना दिया गया तथा इन्हें तीर्थ के रूप में घोषित कर दिया गया। आम जनता में यह धार्मिक भावना पैदा की गई कि जीवन के रहते प्रत्येक प्राणी को कम से कम एक बार इन तीर्थों को देखना और भ्रमण करना जरूरी है, अन्यथा जीवन निरर्थक है। विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद का अंतिम मंडल आर्य ब्राह्मण अपने तीसरे पड़ाव आने तक लिख चुके थे। यही कारण है कि आर्य ब्राह्मण अपने तीसरे पड़ाव को सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व का क्षेत्र घोषित करने में सफल रहे।

जैसे–जैसे काल बीतता गया, आर्य ब्राह्मण ने यज्ञवाद के साथ नाना प्रकार के कर्मकाण्ड पद्धति का सृजन करते गये। यद्यपि वेदों में आत्मा, ईश्वर तथा मंदिर का कोई उल्लेख नहीं है, तथापि उत्तरवैदिक काल में इन सब के नाम पर ब्राह्मणों ने व्यापक व्यापार करना शुरू कर दिया था। इन्होंने अपने इस अंतिम पड़ाव को धार्मिक महत्व देकर इसका संबंध पवित्रता से जोड़ दिया तथा मोक्ष के लिए प्रत्येक हिन्दू को तीर्थ यात्रा, दान–पुण्य और चढ़ावा अनिवार्य कर दिया। गौरतलब है कि आर्यों ने उसी स्थान को तीर्थस्थल के रूप में महत्व दिया, जो उनका अन्तिम पड़ाव था, जहाँ वे स्थायी रूप से बसे। उन्होंने उस स्थान का तीर्थ के रूप में पुराण ग्रंथों में वर्णन कर उसका धार्मिक महत्व प्रदान किये। प्रयाग के संबंध में संत तुलसीदास लिखते हैं –

तीर्थ पति पुनि दीख प्रयागा। निरखत जनम कोटि अघ भागा।''

अर्थात् ''प्रयाग को तीर्थों का राजा कहा जाता है, जिसके एक बार दर्शन से हजारों जन्मों के पाप दूर हो जाते हैं।'' आर्यों के इस धार्मिक भावना से प्रतीत होता है कि तीर्थों में प्रयाग विशेष महत्व का स्थान था। ऐसा प्रतीत होता है कि कोई प्रभावशाली आर्य अधिक संख्या में प्रयाग में बसे होंगे; इसलिए शास्त्रों में इसके धार्मिक महत्त्व का खूब बखान किया गया है। आम जनता पर इसका भारी असर हुआ, यही कारण है कि दुःख से व्याकुल भारत की आम जनता बगैर परिश्रम दुःख निवारण हेतु इन जगहों पर खिंचा चला आता है और कथित परलोक में स्थान सुनिश्चित कराने हेतु इस जन्म के खून–पसीने की कमाई लुटा देता है।

आर्य ब्राह्मणों के वंशजों ने भी अपने पूर्वजों के धार्मिक धंधेबाजी को आगे बढ़ाते हुए समय–समय पर यहाँ काफी मंदिरों और मठों का निर्माण किया तथा कर्मकाण्ड आदि का बढ़ावा दिया, जो आज तक जारी है। चूँकि ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से पैदा हुए हैं, उनको श्रम नहीं करना है, केवल शिक्षा और पूजा का काम करना है, इसलिए बाद के पीढ़ियों ने गंगा–यमुना के तटीय इलाके को धार्मिकता और पवित्रता से जोड़ा तथा मुफ्त में पेटभरी का उपाय किया। गंगा का उल्लेख वेद में भी आया है, परन्तु पौराणिक ग्रंथों में तो गंगा का वर्णन बड़े ही चमत्कारी, मनोहारी और सर्वफलदायिनी गंगा मइया के रूप में आया है। आज भी प्रत्येक हिन्दू गंगाजल को पवित्र मानता है तथा उसका उपयोग धार्मिक अनुष्ठानों में करता है। गंगाजल के प्रति हिन्दुओं में पवित्रता के भाव उत्पन्न करने में प्रकृति का भी हाथ है। यदि गंगाजल को किसी बर्तन में सालों रखा जाय तो भी उसमें जीवाणु नहीं लगते हैं, यही प्राकृतिक विशेषता है गंगाजल की, और गंगा का यही गुण आम जनता में श्रद्धा उत्पन्न करता है। परन्तु गंगा के पानी में जीवाणु क्यों नहीं लगते इसका एक वैज्ञानिक कारण है, और वह है गंगा के पानी में वैक्टीरियोफेज का होना। वैक्टीरियोफेज एक ऐसा जीवाणु है जो रोग फैलाने वाले जीवाणु को नष्ट कर देता है, जिस कारण पानी जीवाणमुक्त रहता है। गंगा की पवित्रता का यही रहस्य है। परन्तु जब वहीं गंगा जल रासायनिक प्रक्रिया (वाटर ट्रीटमेंट) द्वारा शुद्धिकरण के बाद पीने के रूप में शहर में आपूर्ति की जाती है और उस जल को किसी बर्तन में बहुत दिन तक रखा जाता है तो उसमें जीवाणु लग जाते हैं। वाटर ट्रीटमेंट के दौरान प्रयुक्त रासायनिक पदार्थ से वैक्टीरियोफेज मर जाता है जिससे जीवाणु की वृद्धि होने लगती है और पानी सड़ जाता है। पाठकगण गंगाजल की पवित्रता के इस मिथक की वास्तविकता जानकर पंडों के जाल में नहीं फँसेंगे, ऐसी आशा है।

आर्य ब्राह्मण अपने अस्तित्व और प्रभुत्व को टिकाये रखने के लिए समय–समय पर मंदिरों और तीर्थों का नवनिर्माण करते रहते हैं। इसी संदर्भ में आदिशंकराचार्य ने भारत के चारों दिशाओं में ब्राह्मणी संस्कृति के विस्तार के लिए चार धाम–केदारनाथ, कन्याकुमारी, द्वाराका और जगन्नाथपुरी स्थापित किया, जिसमें ब्राह्मण जाति के 'शंकराचार्य' नियुक्ति की परम्परा आज तक चल रही है। अक्षर धाम, अयोध्या में प्रस्तावित राम मंदिर उसी कड़ी का एक हिस्सा है।

अतः वे लोग, जो यह समझते हैं कि हरिद्वार, वाराणसी, काशी, अयोध्या, प्रयाग, जगन्नाथपुरी, द्वारका, कुंभ आदि स्थानों में घूमने और नहाने से पाप कट जायेगा, दुख से मुक्ति मिल जायेगी तथा मरने के बाद बैकुण्ठ धाम मिल जायेगा। वाराणसी में श्राद्ध करने और गया में पिंडदान करने से पितरों को स्वर्ग मिल जायेगा, उनकी यह भूल है। यदि ऐसा होता तो गंगा नदी में पाये जाने वाले मछली, मेंढक, मगर आदि तथा तीर्थस्थानों में भटकने वाले कुत्ता, बिल्ली, खच्चर को पहले स्वर्ग की प्राप्ति होती। सच्चाई यह है कि उनकी मुक्ति और उन्नति उनके स्वयं के परिश्रम और संघर्ष से ही संभव है। 4 मार्च, 1933 को बंबई में आयोजित अछूत बैठक में बाबासाहब द्वारा दिये गये सीख का हमें पूर्ण मनोयोग से अमल करना चाहिए। इस बैठक में उन्होंने कहा था कि–तुम्हें अपनी दासता स्वयं मिटानी होगी, अपनी दासता मिटाने हेतु ईश्वर अथवा अतिप्राकृतिक शक्ति पर निर्भर मत होओ। धार्मिक ग्रंथों, तीर्थस्थानों और उपवासों के प्रति तुम्हारी आस्था तुम्हें दासत्व और दरिद्रता से मुक्त नहीं कर देगा। तुम्हारे पूर्वज पीढ़ियो से ऐसा करते आ रहे हैं लेकिन तुम्हारे जीवन की दयनीयता किसी भी प्रकार कम नहीं हुई। तुम्हारा धार्मिक उपवास, तपस्या और प्रायश्चित तुम्हें भूखे मरने से नहीं बचा पाया है। अतः तुम्हें राजनीतिक शक्ति प्राप्त करनी होगी ताकि तुम अपने उद्धार के लिए कानून बना सको, अतः तुम अपना ध्यान पूजा–पाठ से हटाकर विधि निर्माणकर्ता की शक्ति प्राप्त करने में लगाओ। इसी में तुम्हारी मुक्ति निहित है। तुम्हें इसके लिए चौकन्ना, मजबूत, सुशिक्षित और स्वाभिमानी बनना पड़ेगा। वास्तव में तीर्थस्थानों का केवल भौगोलिक और ऐतिहासिक महत्व है। ये स्थान आर्य आक्रमण के निशानी का प्रतीक है। मूल निवासियों के उर्वर मैदानी इलाकों पर आर्यों द्वारा कब्जा जमाने तथा उन्हें गुलाम बनाने का प्रतीक हैं। ऐसे प्रतीक स्थलों को तीर्थ मानना, उसे ईश्वरीय समझना अपनी आजादी, धन, समय और स्वामित्व का नाश करना है। मूलनिवासी दलितबहुजनों के लिए तीर्थ तो सारनाथ, लुम्बनी, कुशीनगर, बोधगया, राजगृह है जो बहुजन उद्धारक महामानव बुद्ध का जन्म और कर्मस्थली है। बुद्ध ने बहुजनों को असमानता पर आधारित ब्राह्मणवादी गर्त से निकालकर समतावादी समाज में जीने का अवसर प्रदान किया है। इनकी प्रेरणा पाकर विश्वविभूति बाबासाहब डॉ. अम्बेडकर ने हमें ब्राह्मणी गुलामी से मुक्ति दिलाकर सम्मान के साथ जीने का मार्ग दिखाया। हमारे देवता भगवान बुद्ध, महावीर, कबीर, रविदास, रामास्वामी नायकर, ज्योतिबाफूले, संत गाड़गे, गौरेया बाबा, चौहरमल, क्षत्रपति शाहू जी महाराज, बाबासाहब डॉ. अम्बेडकर हैं। हमें इनका स्मरण करना चाहिए तथा इनसे जुड़े, साहित्य और क्षेत्रों से संबंध रखना चाहिए। दलित–बहुजनों का इसी में कल्याण है।

साभार – आनुवांशिक शोध (D.N.A.)
एवं विदेशी आर्य ब्राह्मण
पृष्ठ सं. 61 से 65
डॉ. विजय कुमार त्रिशरण

सेवा में,

नाम .....

पता .....

.....

.....

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।